30.00

सफ़र 1432

मरयम

माँ की ज़िम्मेदारियाँ

डूबता सूरज

अज़ादारी हिन्द्री में

माँ-बेटी

क्या वाक़ई औरतों में अक़्ल कम होती है?

क़ज़ा नमाज़

दिल की आँख

GULSHAN

MEHANDI & HERBALS

IRFAN ALI PRADHAN
403 & 404, A Block,
REGALIA HEIGHTS, Ahmadabad Palace Road,
KOHE-FIZA, BHOPAL (M.P.) 462001, INDIA.
+919893030792, +917554220261

MOHTARMA "GULSHAN"
44, Ganesh Niwas, Shamla Hills Road
Near AAKASHWANI
BHOPAL (MP)
0755-4224261

वह यज़ीद जिसका महल इतना आलीशान था कि हर देखने वाला बस देखता रह जाता था। कहा जाता है कि लोगों को यज़ीद तक पहुंचने के लिए सात हालों से गुज़रना पड़ता था जहां यज़ीद अपने शाही तख़्त पर बैठा होता था और उसके साथ सारे मुल्कों के सफ़ीर सोने-चांदी की कुर्सियों पर बैठे होते थे। ऐसी हालत में रसूल की बेटियों को वहां लाया गया जिनमें अली की शेरदिल बेटी जनाबे ज़ैनब भी थीं। दरबार में जनाबे ज़ैनब के दिल पर रूहानियत का एक ऐसा नूर पैदा हुआ और वहां के लोगों पर आपका इतना रौब पड़ा कि बोलने में माहिर माने जाने वाले यज़ीद की ज़बान पर भी जैसे ताला पड़ गया था। यज़ीद जब शेर पढ़-पढ़ कर अकड़ रहा था तो जनाबे ज़ैनब की आवाज़ बुलंद हुई, "ऐ यज़ीद! क्या तू यह समझता है कि आज तूने हमें क़ैद कर लिया है, हमारे ऊपर ज़मीन और आसमान को तंग कर दिया है और हमें तूने अपना गुलाम बना लिया है या क्या तू समझता है कि अल्लाह की नेमत तेरे ऊपर नाज़िल हुई है?! अल्लाह की क़सम! मेरी नज़र में तू बहुत छोटा और ज़लील है और मेरी निगाह में तेरी कोई हैसियत नहीं है।"

जनाबे ज़ैनब की तक़रीर सुनकर यज़ीद मजबूर हो गया कि वहीं शाम ही में अपना बर्ताव बदले और कहना शुरू कर दे कि ख़ुदा इब्ने ज़ियाद पर लानत करे! मैंने उसे हुसैन के क़त्ल का हुक्म नहीं दिया था बल्कि उसने ख़ुद ही ऐसा किया है।

जनाबे ज़ैनब ने इसके बाद कहा, "ऐ यज़ीद! तू अपनी सारी चालें चल ले और जो कुछ करना है कर ले! लेकिन यह याद रख कि तू हमारा नाम नहीं मिटा सकता बल्कि हमें मिटाने में तू ख़ुद ही मिट जाएगा।"

December
January
2011

Monthly Magazine

मरयम

MARYAM

A Socio-Cultural & Religious Monthly Magazine

Chief Editor
M. Hasan Naqvi

Editorial Board
M. Fayyaz Baqir
Akhtar Abbas Jaun
Qamar Mehdi
Ali Zafar Zaidi

Managing Editor
Abbas Asghar Shabrez

Executive Editor
Fasahat Husain

Assist. Exec. Editor
M. Aqeel Zaidi

Contributors
Imtiyaz Abbas Rizwan
Abid Raza Noashad
Azmi Rizvi
Fatima

Graphic Designer
Siraj Abidi
9839099435

Typist
S. Sufyan Ahmad

इस महीने आप पढ़ेंगी...

डूबता सूरज	22
इमाम मूसा काज़िम[अ०]	8
माँ की ज़िम्मेदारियाँ	14
बच्चों पर आवाजों का असर	32
इस्लाम और समाज	11
अम्र बिल मारूफ़	40
एहकाम	38
शेर दिल बेटी का ख़ुतबा	29
अज़ादारी हिस्टरी में	18
इमाम हसन[अ०] की सुलह	30
चिकन क़ौरमा	34
दिल की आँख	13
क्या वाक़ई औरतों में अक़्ल कम होती है?	35
मेरी माँ	12
माँ-बेटी	24
नफ़्स की पाकीज़गी	16
सलाम	42
नूरानी इंक़ेलाब	29
क़ज़ा नमाज़	28
हुसैनी फ़तह का एलान है ज़ैनब[अ०]	17
औरत हिस्टरी में	5
सकीना[अ०],ज़िंदाने शाम में शहीद हो गई	10
करबला के बाद कूफ़े के हालात	31

मेहरबान ख़ुदा के नाम से

यह वह शबो-रोज़ हैं जिनमें रसूल[स०] की बेटियाँ और बच्चे करबला में ज़ुल्म का बहादुरी से मुक़ाबला करके शाम व कूफ़ा के रास्ते में इस्लाम को ज़िंदा रखने की अपनी अंथक कोशिश कर रहे थे, उस इस्लाम को ज़िंदा कर रहे थे जिसको उस वक़्त के ख़लीफ़ा यज़ीद ने क़रीब-क़रीब ख़त्म ही कर दिया था, वह इस्लाम जिसको रसूले इस्लाम[स०] और हज़रत अली[अ०] ने अपने ख़ूने जिगर से सींचा था, जिसमें इमाम हसन[अ०] का ख़ून भी शामिल था, यही नहीं बल्कि जनाबे फ़ातिमा[स०] ने भी इसके लिए बेपनाह क़ुरबानियाँ दी थीं।

इमाम हुसैन[अ०] ने जो क़दम उठाया और उसका जो फ़ाएदा हुआ वह आज हमारे ही नहीं बल्कि सारी दुनिया के सामने है। ग़ैर भी इस बात को खुले दिल से मानते हैं कि हुसैन[अ०] अगर शहीद न होते तो इस्लाम का दुनिया में कहीं नामो-निशान न होता।

हमारे लाखों सलाम हों हुसैन और उनके असहाब पर!

सफ़र का महीना इमाम हुसैन[अ०] के चेहलुम का महीना है। ख़ुदाया! हमें हुसैन[अ०] के रास्ते पर चलने और उनके मिशन को आगे बढ़ाने की तौफ़ीक़ दे ताकि हम अपने ज़माने के इमाम[अ०] को मुँह दिखा सकें।

'मरयम' में छपे सभी लेखों पर संपादक की रज़ामंदी हो, यह ज़रूरी नही है।
'मरयम' में छपे किसी भी लेख पर आपत्ति होने पर उसके खिलाफ़ कारवाई सिर्फ़ लखनऊ कोर्ट में होगी और 'मरयम' में छपे लेख और तस्वीरें 'मरयम' की प्रॉपर्टी हैं।
इसका कोई भी लेख, लेख का अंश या तस्वीरें छापने से पहले 'मरयम' से लिखित इजाज़त लेना ज़रूरी है। 'मरयम' में छपे किसी भी कंटेंट के बारे में पूछताछ या किसी भी तरह की कारवाई प्रकाशन तिथी से 3 महीने के अंदर की जा सकती है। उसके बाद किसी भी तरह की पूछताछ और कारवाई पर हम जवाब देने के लिए मजबूर नहीं हैं।
संपादक 'मरयम' के लिए आने वाले कंटेंट्स मे ज़रुरत के हिसाब से तबदीली कर सकता है।

Printer & publisher Nazar Abbas Rizvi printed at Imagine Grafix, 4-Valmiki Marg,Lalbagh, Lucknow and published from 234/22 Thawai Tola, Victoria Street, Chowk, Lucknow 226003 UP-India

Contact No.: +91-522-4009558, 9956620017, 9453826444
email: maryammonthly@gmail.com

औरत हिस्टरी में

■ डॉ. अली क़ाएमी

पुराने समाजों में औरत के बारे में अजीब ख़यालात और बातें पाई जाती थीं। कोई उसे इंसान व जानवर के बीच एक पुल समझता था, कोई उसे नापाक और मनहूस मानता था यहाँ तक कि उसका साया तक नापसंद और उसका साथ भी बुरा समझता जाता था। हमारे यहाँ अभी तक भी इसका गहरा असर पाया जाता है।

जब भी कहीं कोई औरत बिकती थी तो उसकी क़ीमत जिस्म को देखकर तय होती थी, वह हाथों-हाथ फिरने वाली जिंसी लज़्ज़त थी और उसके दो ही काम थेः-

1-मर्द की ख़िदमत करना, 2-मर्द के लिए जानशीन पैदा करना।

इसके अलावा औरत कुछ नहीं थी।

औरत के लिए जंगें हुईं, औरत जीत में मिली, औरत माले ग़नीमत बनी। पहलू की ज़ीनत, बग़ल का आराम, रात की लज़्ज़त और महफ़िल की शमा। अगर औलाद वाली हुई तो ख़ैर...नहीं तो ज़लील व बेकार।

पिछले ज़माने में हमारे कल्चर में भी लड़की, ख़ानदान की कमज़ोरी और माँ-बाप के लिए बोझ थी। अरबों में औरत का वुजूद ख़ानदान के दामन पर धब्बा समझा जाता था। वह लड़की का ख़याल करके बेइज़्ज़ती और ज़िल्लत के ख़यालों में डूब जाते थे। बेटी की पैदाईश की ख़बर बाप को आने वाले ख़तरों से डराने लगती थी और उसका चेहरा बुझ जाता था। जिसकी वजह से वह उसे ज़िंदा ज़मीन में दफ़न कर देना पसंद करता था।

हिस्टरी के लम्बे बहाव और ज़िंदगी के तूफ़ानी दौर में, औरत लगातार उतार-चढ़ाव, रंज व बेइज़्ज़ती का निशाना और मुसीबतों और मुश्किलों का शिकार बनी रही है क्योंकि उसे जाहिल रखा गया है, इसलिए भी ये नहीं हो सका कि वह अपनी अहमियत को समझती और फिर अपना सही मुक़ाम हासिल कर लेती।

औरत की बदनसीबियों की वजह आम तौर पर ख़ुद उनकी जैसी औरतें ही हुई हैं जो बहुत आसानी से बदकिरदार लोगों का हथियार बनकर अंजान और बेख़बर लड़कियों को जिस्म फ़रोश बना देती हैं। फिर दुकानों की शो-केस, माल का इश्तेहार, सिनेमा का करोबार और इशरतकदों का शौर व रौनक़ बनाकर उनके साथ पुराने ज़माने से भी बुरा सुलूक किया जाता है।

औरतः वेस्टर्न कल्चर में

पश्चिमी दुनिया का आज का कल्चर इस्लाम के बाद सामने आया है। नेचरली इसका तज़किरा भी इस्लाम के बाद ही होना चाहिए लेकिन एक ग्रुप का दावा है कि इस्लाम से पहले पश्चिमी दुनिया ने औरत की इज़्ज़त और क़ीमत बढ़ाई है।

पश्चिमी दुनिया ने औरत को आज़ादी दी। एहतेराम और इज़्ज़त बख़्शी...?

औरत आज़ाद हुई। किस बात के लिए? किस लिए और किस ग्राउंड पर?

वह आज़ाद है ताकि वह हर भूके की आवाज़ पर दौड़ पड़े और इस रास्ते में कोई रुकावट और इस काम में उस पर कोई पाबंदी न हो।

औरत आज़ाद है ताकि बदकारों की नज़र के सामने रहे, जिंसी आग में जलने वालों की आग बुझाए...पिए और पिलाए...और फिर "जिस्म की शायरी" से मर्दों को गरमाए।

डाँस जो एक बहुत मुश्किल काम है, बहुत मुश्किल फ़न है...वह ये मेहनत का काम इसलिए करे ताकि मर्द उस से मज़ा उठाए...?

औरत दुनियावी और रूहानी एतेबार से आज़ाद नहीं है। वह अपने मामलात को ख़ुद तय नहीं कर सकती है, वह अपने फ़्युचर और अपनी तक़दीर के बारे में ख़ुद नहीं सोच सकती।

औरत आज़ाद है...आज़ादी का ख़ास मतलब है। औरत की आज़ादी असल में मर्दों की आज़ादी है। मर्द जिस तरह चाहें औरतों को इस्तेमाल करें। औरत को तर निवाला खिलाएं, पैसे उसकी जेब में डालें, एक क़ीमती चस्टर, एक सोने की ज़ंजीर, उमदा क़िस्म की जीप मोटरकार, आराम का सामान, ज़ेवर दें और क़ैदी बनाएं...अपने जाल में फंसाएं और कुछ दिन मेले और रातें उसके साथ गुज़ार कर ठोकर मार दें।

औरत के बारे में पश्चिम का बर्ताव, नाम के लिए मोहतरम कनीज़,...धोई लौंडी, ख़ूबसूरत नौकरानी या कमीशन लेने वाली नौकर, पतली कमर क्लर्क, मर्दों का खिलौना, नख़रों और अदाओं वाली, महफ़िल की गर्मी, नशे वाली चीज़ से ज़्यादा कुछ नहीं है!

पश्चिम ने औरत को ऐसे गिरोह के हवाले किया है जो औरत को सिर्फ़ लज़्ज़त और अपनी पसंद के लिए चाहता है और जैसे ही दिल भर जाता है उसे दूर फेंकर नई उलझनों और ज़हनी व जिस्मानी तकलीफ़ों की ज़िंदगी के गंदे क़ैदख़ाने में तड़पने के लिए छोड़ देता है।

पश्चिम की औरत ज़हनी उलझन में गिरफ़्तार और कुछ दिन ख़ुशगुज़ारी के बाद हमेशा ग़मों के शिकंजे में बेबस क़ैदी है।

पश्चिमी कल्चर में औरत की ग़र्ज़, ख़ानदान की मुहब्बत भरी ज़िंदगी से महरूमी...बिना ज़िम्मेदार और नाजायज़ औलाद की पैदाईश और ज़्यादती, ऐय्याश नौजवानों के पहलू गर्म करना, एक समाज में ऐसी नस्ल तैयार करके देना जो बेलगाम ऊँट हो... एहसासात और जज़्बात और आदमी के एहतेराम से बेख़बर हो।

पश्चिम जब इस दलदल में फंस चुका तो उसे अब होश आया है, उसे अपनी किए का नतीजा भुगतना ही पड़ेगा।

औरत और इस्लाम

इस्लाम ने औरत के बारे में पिछले रस्मो रिवाज को परखा। हिन्दू और यूनानी स्कूल ऑफ़ थाट में उसे नापाक और मनहूस मख़लूक़ और ख़ानदान के कंधों पर बोझ कहा जाता था। इस्लाम ने उसे ठुकरा दिया। इस्लाम ने औरत को नीच और बेइज़्ज़त करने के बजाए रहमत व नेमत बताया।

यूरोप की जेहालत वाले ज़माने में अक़ीदा था कि औरत मुश्किलें पैदा करने और दुनिया बर्बाद करने वाली चीज़ और ख़रीदने-बेचने वाला माल है। इसका फ़ायदा सिर्फ़ सेक्चुअल डिज़ायर्स पूरा करना है।

इस्लाम ने इस नज़रिए को ख़त्म किया और औरत को इंसानी समाज में एक इज़्ज़तदार रुतबा दिया। उसे तहज़ीब की तरक़्क़ी और कल्चर के बाक़ी रहने की ज़मानत, आज़ादी, इज़्ज़त और एतेबार का मालिक बताया।

इस्लाम जिस माहौल से उभरा उसमें औरत का वजूद माँ-बाप की शर्मिंदगी की वजह था। संगदिल बाप किसी बात का लेहाज़ किए बिना अपनी लड़कियों को ज़िंदा दफ़न कर देते थे।

इस्लाम इस बारे में ख़ामोश या न्युट्रल नहीं रहा। उसने एक इंक़ेलाबी रास्ता निकाला यानी औरत को बाइज़्ज़त और बा एहतेराम मानने के अलावा उसके तक़द्दुस का इंतेज़ाम किया।

इस्लाम ने औरत को उस ज़िल्लत भरे माहौल से निजात दिलाई, उसे मर्द जैसा इंसान मनवाया, वही जौहर, वही रूह, वही इज़्ज़त, वही क़ीमत और वही हक़ीक़त बताई।

इस सिस्टम में औरत मर्द से बेहतर या कमतर का सवाल नहीं रहा, इस्लामी सिस्टम में कुछ हालात में मर्द से कमतर, कुछ में बराबर, कुछ एतेबार से उसे मर्द से बेहतर बताया गया है।

इस्लाम की नज़र में क़ुरआन मजीद की बुनियाद पर औरत ख़ुदा की निशानियों में से एक निशानी है, वह ख़िलक़त की एक अज़ीम निशानी है। उसका हुस्न, अपनी इज़्ज़त और पाकीज़गी को बचाने में, और उसकी सही क़ीमत पाकीज़गी व पाकदामनी के साये में है।

उसकी कमज़ोरी कोई ऐब नहीं, बुराई अगर है तो बदकिरदारी और

बेइज़्ज़ती व बेशर्मी में है।

उसकी क़द्रो क़ीमत दफ़्तरों के आने जाने में नहीं, जहाँ वह क्लर्क या टाइपिस्ट, किसी वज़ीर की पी.ए. बन जाए या वज़ारत हासिल कर ले। असल में उसका मुक़ाम ये है कि एक बेहतरीन नस्ल को परवान चढ़ाए जो ज़िम्मेदार, तक़वे वाली और शराफ़त वाली हो। वह समाजी मामलों में मर्दों के साथ-साथ काम कर सकती है लेकिन उसकी बरतरी इसी में है कि अपनी नस्ल की परवरिश करे। इस सिलसिले में अपनी औलाद पर ध्यान देना उसकी सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी है। माँ का ये फ़र्ज़ है कि वह अपनी रहनुमाई से अपनी औलाद को सबके लिए अच्छे किरदार वाला और मोमिन बनाए।

औरत की अहमियत और उसके हक़

हम मुसलमानों की नज़र में औरत बड़ी अहमियत वाली होती है। उसकी हैसियत कई एतेबार से बेहद असरदार है, वह अपनी जगह पुरकशिश और मुहब्बत का पैकर है। वह समाज की परवरिश करती है। एक टीचर से भी बुलंद मक़ाम रखती है क्योंकि उसका लहजा बच्चों के दिल पर ज़्यादा असर करता है।

ठीक उस वक़्त जब वह अपने बेटे-बेटी के लिए खाना तैयार करने की ज़िम्मेदारी क़ुबूल करती है उसी लम्हे वह समाज को मोमिन व मुजाहिद, आलिम व रिसर्च स्कालर व रहबर भी देती है। वह "माँ" है जो एक हाथ से झूला झुलाती है और दूसरे हाथ से पूरी दुनिया को हिला सकती है। उसके क़दमों के नीचे जन्नत है। वह समाज को जन्नती या जहन्नमी, दोनों तरह के लोग देने की ज़िम्मेदार है।

इस्लाम में औरत को मर्दों जैसे हक़ दिए गए हैं (बराबर नहीं), लेकिन उसकी जिस्मानी बनावट, मिज़ाज, आदतें और एहसासात व जज़बात की बुनियाद पर...उन ज़िम्मेदारियों की बुनियाद पर जो उसे इस्लामी समाज में सौंपे गए हैं। और अगर गहरी नज़र से देखा जाए और सही तरह से उसके हक़ उसको मिल जाएं तो मर्दों के मुक़ाबले में उसकी हालत मर्दों से अच्छी है।

ख़ुदा ने जो सलाहियतें उसे दी हैं उनके सहारे वह इंसानी अज़मतें हासिल कर सकती है। उसे हक़ है कि समाजी ज़िंदगी व समाजी मामलात में असरदार और सीधे तौर पर काम करे। शर्त ये है कि बहाना बनाने वाले और बुरे किरदार वालों का खिलौना न बन जाए और लोग उसके वुजूद से ग़लत फ़ायदा न हासिल करें और वह धोके का निशाना न बने।

इस्लाम और औरतों की तरबियत

इस्लाम ने सेहतमंद समाज के लिए औरत की तारीफ़ की, उसकी ज़ात को नुमायाँ किया और रसूलुल्लाह ﷺ ने उसका एहतेराम किया, उसे इज़्ज़त बख़्शी, नेक औरत को जन्नत का फूल, बेटी को माँ-बाप का गुलदस्ता कहा, माँ-बाप को उसकी परवरिश व निगरानी का ज़िम्मेदार बनाया।

वह इंसानी तारीख़ व समाज में अब तक जुल्म व नाइंसाफ़ी का शिकार हुई थी उसे भूली-बिसरी चीज़ समझा गया था, समाजी हक़ों से महरूम और इल्म से दूर चली आ रही थी। मर्द उस पर बुरी तरह छाए हुए थे।

इस्लाम ने आते ही सबसे पहले औरतों को बेचारगी के आलम से निकाला। उसे अपनी ज़ात की समझ और क़ानून व अपने हक़ों को पहचानने के क़ाबिल बना दिया।

इस्लामी हिस्टरी में सहाबा की बीवियों के नाम से एक ख़ास दर्जा तय किया गया। उनकी देखभाल सीधे तौर पर रसूलुल्लाह ﷺ करते थे। उनकी मालूमात और उनकी तालीम का मेयार बुलंद करने का पूरा इन्तिज़ाम था। उन्हें शौहरों की तालीम, जंग पर जाने और बीमारों की फ़र्स्ट-एड और ज़ख़्मियों की देखभाल, कभी बैअत लेते वक़्त मर्दों के साथ औरतों से बैअत लेने (सियासी अमल) की इज़्ज़त भी दी। रसूले इस्लाम ﷺ की तवज्जो ने औरत को एक नया वुजूद बख़्शा, एक बाइज़्ज़त वुजूद व एक ख़ूबसूरत वुजूद।

हज़रत फ़ातिमा ज़हरा ؓ की ज़िंदगी देखिए...!

हज़रत ज़ैनब ؓ के कारनामों पर नज़र डालिए...!

हज़रत अली ؑ की हिमायत में उनके जलसे और औरतों को हालात से बाख़बर करने की मुहिम...

इस तरह दूसरे इमामों के ज़माने में औरतों की तरफ़ से हिमायती और समाजी कोशिशों में हिस्सा...

इमामों की तरफ़ से शौहरों को बीवियों के हक़ों का याद दिलाना और माँ-बहनों के एहतेराम की तालीम...

नबी ﷺ के ज़माने की मेहनतें रंग लाईं और हज़रत अली ؑ के ज़माने में कई औरतों ने हक़ की हिमायत की जिनमें से एक हज़रत सौदा हैं जो अपने ख़ास रोल की वजह से तारीख़ में इज़्ज़त की नज़र से देखी जाती हैं।

इमाम मूसा काज़िम अ०

इमाम मूसा काज़िम[अ०] 7 सफ़र 128 हि० को पैदा हुए थे। आपके वालिद का नाम इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] और वालिदा का नाम हमीदा था।

इमाम मूसा काज़िम[अ०] का इल्म और फ़ज़्लो-करम अल्लाह का अता किया हुआ था। आप[अ०] की इबादत और परहेज़गारी इतनी थी कि आपको अब्दे सालेह यानी नेक बंदा कहा जाता था। आप बहुत साबिर और शुक्र करने वाले थे, बड़ी-बड़ी मुसीबतों को बर्दाश्त कर जाते थे और लोगों की ग़लतियों को माफ़ कर देते थे। अगर कोई जिहालत की वजह से आप के साथ इस तरह पेश आता था जो ग़ुस्सा दिलाने वाला हो, तो आप अपने ग़ुस्से को पी जाते थे और मुहब्बत व मेहरबानी से उसकी रहनुमाई करते थे। इसीलिए आप को काज़िम[अ०] यानी ग़ुस्से को पी जाने वाला कहा जाता था। इमाम मूसा काज़िम[अ०] पचपन साल इस दुनिया में ज़िंदा रहे और 25 रजब 183 हिजरी को बग़दाद में शहीद कर दिए गए।

एक किसान की हिदायत

एक फ़क़ीर और ग़रीब शख़्स खेती करता था। जब भी इमाम मूसा काज़िम[अ०] को देखता आप से गुस्ताख़ी करता और आपको गालियाँ देता था। वह हर रोज़ इमाम मूसा काज़िम[अ०] और आपके दोस्तों को तंग करता था। इमाम मूसा काज़िम[अ०] बराबर अपना ग़ुस्सा पी जाते थे और उसकी गालियों का कोई जवाब नहीं देते थे लेकिन आप के दोस्त उस शख़्स की बेअदबी और गुस्ताख़ी से बहुत नाराज़ होते थे। एक दिन जब उस आदमी ने पहले की तरह अपनी ज़बान बुराई के लिए खोली तो इमाम मूसा काज़िम[अ०] के दोस्तों ने कहा कि आज इसे इतना मारेंगे कि मर ही जाएगा ताकि इसकी बदज़बानी हमेशा के लिए बंद हो जाए और इस दुनिया में ही अपने किए का नतीजा भुगत ले। इमाम मूसा काज़िम[अ०] को उनके इस फ़ैसले के बारे में पता चल गया।

आप ने उन्हें ऐसा करने से सख़्ती से मना कर दिया और फ़रमाया कि तुम सब्र करो, मैं ख़ुद उसे अदब सिखाऊँगा। कुछ दिन गुज़र गए लेकिन उस शख़्स की बुरी हरकतों में कोई फ़र्क़ नहीं आया। इमाम मूसा काज़िम[अ०] के असहाब इन हालात से बहुत नाराज़ थे लेकिन जब भी वह कुछ करने के बारे में सोचते तो आप उन्हें रोक देते थे और फ़रमाते थे कि सब्र करो, मैं ख़ुद उसे नसीहत करूँगा। एक दिन इमाम मूसा काज़िम[अ०] ने पूछा कि वह आदमी कहाँ है। उन लोगों ने कहा कि शहर के बाहर अपनी ज़मीन पर खेती करने में लगा है। इमाम मूसा काज़िम[अ०] सवार हुए और उसकी तरफ़ चल पड़े।

उसने जब इमाम[अ०] को आते देखा तो अपने बेलचे को ज़मीन पर गाड़कर हाथ कमर पर रखकर खड़ा हो गया। वह अपनी ज़बान बुराई के लिए खोलना चाहता ही था कि इमाम मूसा काज़िम[अ०] सवारी से उतरे और उसकी तरफ़ बढ़े। मेहरबानी से सलाम किया और बहुत नर्मी से हंस कर उस से बातचीत शुरु कर दी। आप[अ०] ने कहा कि तुम थक तो नहीं गए हो, तुम्हारी ज़मीन कितनी हरी-भरी है, इस से कितनी आमदनी होती है और खेती करने पर कितना ख़र्च होता है वग़ैरा-वग़ैरा। वह इमाम मूसा काज़िम[अ०] की तहज़ीब और ख़ुश अख़लाक़ी से ताज्जुब में पड़ गया और हकलाते हुए बोला कि एक सौ सोने के सिक्के। इमाम मूसा काज़िम[अ०] ने पूछा कि तुमको इस ज़मीन की पैदावार से कितनी आमदनी की उम्मीद है। उसने सोच कर कहा कि दो सौ सोने के सिक्के। इमाम मूसा काज़िम ने एक थैली निकाली और उस से कहा कि तुम्हारी इस से भी ज़्यादा आमदनी होगी। जब उस ने अपने बुरे अख़लाक़ के मुक़ाबले में ये बेहतरीन अख़लाक़ देखा तो बहुत शर्मिंदा हुआ और कांपती हुई आवाज़ में कहा कि मैं बुरा इंसान था और आपको तकलीफ़ देता था लेकिन आप नेक और बुज़ुर्ग इंसान के फ़रज़ंद हैं। आप[अ०] ने मेरे साथ अच्छाई की है और मेरी मदद की है। हो सके तो मुझे माफ़ कर दीजिए।

इमाम मूसा काज़िम[अ०] ने उसके बाद उसको

ख़ुदा हाफ़िज़ कहा और मदीने की तरफ़ पलट आए। इसके बाद जब भी वह शख़्स इमाम मूसा काज़िम[अ०] को देखता था, बड़े अदब से सलाम करता था साथ ही इमाम मूसा काज़िम[अ०] और आपके दोस्तों का एहतेराम भी करता था और कहता था कि ख़ुदा बेहतर जानता है कि किसको लोगों का इमाम और रहबर बनाए। इमाम मूसा काज़िम[अ०] के दोस्त ताज्जुब करते थे कि किस तरह तकलीफ़ और गालियाँ देने वाला इंसान इतना बाअदब और मेहरबान हो गया है। शायद उन्हें ये नहीं मालूम था कि इमाम मूसा काज़िम[अ०] ने उस की किस तरह तरबियत की थी।

इमाम[अ०] के बचपन के कुछ वाक़िए

इस बात को तो सभी मानते हैं कि नबियों और इमामों में सारी सलाहियतें होती हैं। अभी इमाम मूसा काज़िम[अ०] की उम्र तीन साल ही की थी, एक शख़्स जिसका नाम सफ़वान जम्माल था हज़रत इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और बोला कि मौला! आपके बाद इमाम कौन बनेगा? आपने फ़रमाया कि ऐ सफ़वान! तुम इसी जगह बैठो और देखते जाओ! ऐसा जो बच्चा भी मेरे घर से निकले जिसकी हर बात ख़ुदा की मारफ़त से भरी हो और आम बच्चों की तरह खेलकूद न करता हो, समझ लेना कि इमामत उसी को मिलेगी। इतने में इमाम मूसा काज़िम[अ०] बकरी का एक बच्चा लिए हुए बाहर आए और बाहर आकर उस से कहने लगे, "अपने ख़ुदा को सजदा कर"। ये देखकर इमाम जाफ़र सादिक़ ने उन्हें सीने से लगा लिया।

सफ़वान कहता है कि ये देखकर मैंने इमाम मूसा से कहा, "साहबज़ादे! इस बच्चे से कहिए कि मर जाए।" आपने फ़रमाया कि क्या मौत और ज़िंदगी मेरे ही इख़्तियार में है।

हज़रत अबूहनीफ़ा एक दिन इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] से कुछ दीनी मसले पूछने के लिए आए। आप उस वक़्त आराम कर रहे थे। अबू हनीफ़ा इस इंतेज़ार में बैठ गए कि इमाम जाग जाएं तो उनके पास में जाएं। इतने में इमाम मूसा काज़िम जिनकी उम्र उस वक़्त सिर्फ़ पाँच साल की थी, बाहर निकले। हज़रत अबूहनीफ़ा ने उन्हें सलाम करके कहा कि ऐ साहबज़ादे! ये बताईए कि इंसान अपने काम अपने इख़्तियार से करता है या अपने काम ख़ुदा करता है? ये सुनकर आप ज़मीन पर दो ज़ानू बैठ गए और बोले कि सुनो! बन्दों के काम तीन तरह के हो सकते हैं या तो उनके काम ख़ुदा करता है या वह ख़ुद करते हैं या ख़ुदा और बंदे दोनों शरीक होते हैं। अगर पहली हालत है तो ख़ुदा को बन्दे पर अज़ाब का हक़ नहीं है, अगर तीसरी हालत है तो भी ये इंसाफ़ के ख़िलाफ़ है कि बन्दे को सज़ा दे और ख़ुद को बचा ले क्योंकि काम दोनों ने मिलकर किया है। अब अपने आप दूसरी हालत बचेगी, वह ये कि बंदा अपने काम ख़ुद करता है।

हज़रत अबू हनीफ़ा कहते हैं कि मैंने इमाम जाफ़र सादिक़ के बेटे को इस तरह नमाज़ पढ़ते हुए देखा कि लोग बराबर उनके सामने से गुज़र रहे थे। मैंने इमाम सादिक़[अ०] से कहा कि आपके बेटे मूसा काज़िम नमाज़ पढ़ रहे थे और लोग उनके सामने से गुज़र रहे थे। हज़रत[अ०] ने अपने बेटे मूसा काज़िम को आवाज़ दी। वह आए तो आपने कहा कि बेटा! अबूहनीफ़ा कहते हैं कि तुम नमाज़ पढ़ रहे थे और लोग तुम्हारे सामने से गुज़र रहे थे। इमाम काज़िम ने कहा कि बाबा! लोगों के गुज़रने से नमाज़ पर क्या असर पड़ता है, वह हमारे और ख़ुदा के बीच तो आड़े नहीं आए थे क्योंकि ख़ुदा तो गर्दन की रग से भी ज़्यादा क़रीब है। ये सुन कर आप ने उन्हें गले से लगा लिया और फ़रमाया कि इस बच्चे को शरीअत के राज़ अता हो चुके हैं।

एक दिन अब्दुल्लाह इब्ने मुस्लिम और अबूहनीफ़ा दोनों मदीना पहुँचे। अब्दुल्लाह ने कहा कि चलो इमाम सादिक़[अ०] से मुलाक़ात करें और उनसे कुछ मालूमात हासिल करें। दोनों इमाम के घर पर हाज़िर हुए तो देखा कि इमाम के मानने वालों की भीड़ लगी हुई है। इतने में इमाम सादिक़[अ०] के बजाए इमाम मूसा काज़िम बाहर निकले और लोग ताज़ीम के लिए खड़े हो गए। अगरचे आप उस वक़्त बहुत ही कमसिन थे लेकिन आप ने इल्म के दरिया बहाने शुरु कर दिए। अब्दुल्लाह वग़ैरा ने जो आप से थोड़ी दूर थे आपके क़रीब जाते हुए आपकी इज़्ज़त व एहतेराम का आपस में तज़किरा किया। आख़िर में इमाम अबूहनीफ़ा ने कहा कि चलो! मैं उन्हें उनके शियों के सामने ही रुसवा और ज़लील करता हूँ, मैं उन से ऐसे सवाल करूँगा कि जवाब नहीं दे सकेंगे। अब्दुल्लाह ने कहा कि ये तुम्हारी ग़लतफ़हमी है, वह फ़रज़न्दे रसूल हैं। बहरहाल हज़रत अबूहनीफ़ा ने इमाम मूसा काज़िम से पूछा कि साहबज़ादे! ये बताइए कि अगर आपके शहर में कोई मुसाफ़िर आ जाए और उसे क़ज़ाए हाजत करनी हो तो क्या करे और उसके लिए कौन सी जगह मुनासिब होगी। हज़रत ने फ़ौरन जवाब दिया कि मुसाफ़िर को चाहिए कि मकानों की दीवारों के पीछे छिपे, पड़ोसियों की निगाहों से बचे, नहरों के किनारों से परहेज़ करे और जिन जगहों पर पेड़ों के फल गिरते हों उन से बचे, मकान के सहन से बचकर, सड़कों और रास्तों से अलग, मस्जिदों को छोड़कर, न क़िब्ले की तरफ़ मुँह करे न पीठ, फिर अपने कपड़ों को बचाकर जहाँ चाहे रफ़े हाजत करे। ये सुनकर इमाम अबूहनीफ़ा हैरान रह गए और अब्दुल्लाह कहने लगे कि मैं न कहता था कि ये फ़रज़न्दे रसूल हैं, इन्हें बचपन ही में हर चीज़ का इल्म हुआ करता है।

कहती थी सकीना घर का जलना देखा
मां-बहनों का बलवे में निकलना देखा
ज़िन्दां में गई और तमाचे खाए
इस चार बरस के सिन में क्या-क्या देखा

अ० सकीना

ज़िंदाने शाम में शहीद हो गई

जब ज़ायरीन शाम से करबला जाते हैं तो सकीना उन्हें पैग़ाम देकर कहती हैं कि मेरे बाबा से कहना कि आपको परदेसी सकीना बहुत याद करती है।

क़ैदख़ाने में एक क़यामत बरपा हो गई और वह ये कि एक बच्ची की शहादत हो गई। हुआ ये कि जिस वक़्त यज़ीद का दरबार ख़त्म हुआ और क़ैदी भेजे गए तो उसके महलसरा के पास एक खंडर था, एक टूटा हुआ मकान था। उसका हुक्म ये था कि ये क़ैदी वहाँ भेज दिए जाएं। दुनिया मिट गई, यज़ीद मिट गया लेकिन उस बच्ची की क़ब्र आज भी बाक़ी है। जब क़ैदी उस मकान में दाख़िल किए गए और दरवाज़ा बंद कर दिया गया तो दिन में इतना अंधेरा हो गया था कि एक को दूसरा देख नहीं सकता था। सारे क़ैदी घबरा गए। उन्होंने कहाँ ऐसी जगह देखी थीं जहाँ दिन में भी इतना अंधेरा हो। बच्चे अपनी माओं की गोदियों में बिलक-बिलक कर रोने लगे। माओं ने उनके मुँह पर हाथ रखा, बच्चो! रोओ नहीं! शाहज़ादी को तकलीफ़ होगी, जनाबे ज़ैनब को रंज होगा। जनाबे सकीना कुछ ज़्यादा घबरा गईं थी और बार-बार कहती थीं, "फूफीजान! हम कहाँ आ गए? एक को दूसरा देख नहीं सकता है, हम यहाँ कैसे ज़िंदगी गुज़ारेंगे? फूफी! मेरे बाबा कब आएंगे?"

जनाबे ज़ैनब बच्ची को समझाती रहीं। कुछ बच्चे अंधेरे में घबराने लगते हैं। ये अंधेरा और घुटन, चौंसठ बीबियाँ, उनके गोदों में बच्चे, जनाबे सकीना बहुत घबरा गईं। आपने समझा के सकीना को सुला दिया। रात जो गुज़री और दिन आया तो सकीना ने कहा, "फूफीजान! क्या यहाँ दिन नहीं निकलेगा? यहाँ तो रौशनी है ही नहीं? मैं घुटकर मर जाऊँगी।" जनाबे ज़ैनब समझाती रहीं, यहाँ तक कि जब दूसरी शाम आ गई तो सकीना कुछ इतना ज़्यादा घबरा गईं कि अब जनाबे ज़ैनब जितना समझाती हैं, इस बच्ची को क़रार नहीं आता। बराबर रो रही है। बाबा! जब आप गए थे तो मुझ से कह गए थे कि मैं तुम्हें लेने के लिए आऊँगा, आप कहाँ चले गए? मैं क्या करूँ? मैं इस जगह कैसे रह सकती हूँ? मेरी रूह निकल रही है, बाबा! आइए।" क़रीब आधी रात तक ये बच्ची रोती रही। इसके बाद कभी जनाबे ज़ैनब गोद में लेती थीं, कभी इमाम ज़ैनुलआबिदीन गोद में लेते थे, कभी जनाबे रबाब गोद में लेती थीं। जनाबे रबाब के दो बच्चे थे, एक जनाबे सकीना और एक जनाबे अली असग़र। सकीना को किसी की गोद में क़रार नहीं आता था। आख़िर थक कर ज़रा सी आँख बंद हुई, थोड़ी देर तक सोईं, एक बार जो उठीं तो आवाज़ दी।, "फूफीजान! मेरे बाबा आए हुए थे, मुझे छोड़कर फिर कहाँ चले गए? अभी मुझे गोद में लिए हुए थे, मुझे प्यार कर रहे थे, वह कहाँ चले गए हैं मुझे छोड़कर?"

ये जो बातें शुरु कीं तो बीबियों में एक कोहराम बरपा हो गया। बेइख़्तियार होकर बीबियाँ रोने लगीं। जब आवाज़ें बुलंद हुईं तो यज़ीद के महल तक पहुँच गईं। उसकी आँख खुल गई। किसी से कहा कि पूछकर आओ कि ये कैसा शोर है? इमाम ज़ैनुलआबिदीन ने कहा कि बच्ची यतीम है, उसने ख़्वाब में अपने बाबा को देखा है और अब वह पुकार रही है, ये तमाम बीबियाँ इसीलिए रो रही हैं।

उस ज़ालिम ने क्या किया? ये थे तसल्ली देने के तरीक़े? कहा, "अच्छा! बाप को पुकार रही है। सर ले जाओ, हुसैन का सर ले जाओ और उस बच्ची को दे दो।" यूँ तसल्लियाँ दी जाती हैं?!

इमाम हुसैन[अ०] का सर लाया गया। बीबियों ने जो सुना तो सब की सब खड़ी हो गईं। इमाम हुसैन[अ०] का सर इमाम ज़ैनुलआबिदीन ने लिया। जिस वक़्त आप अंदर पहुँचे, सकीना ने फ़ौरन वह सर ले लिया और उसे सीने पर रखा, मुँह पर मुँह रख दिया। बाबा! ये गला किसने काट डाला है? मुझे किसने यतीम कर दिया?

बाबा! आप तो अभी आए थे तो आपकी गर्दन कटी हुई नहीं थी, ये मैं क्या देख रही हूँ? कहते-कहते रोने लगीं और चीख़-चीख़कर रोने लगीं। बीबियों में एक कोहराम बरपा हो गया। आख़िर इस बच्ची की आवाज़ कम होने लगी। जब बिलकुल इस बच्ची की आवाज़ बंद हो गई तो बीबियाँ समझीं कि शायद सो गई है। जनाबे ज़ैनब जो क़रीब पहुँचीं और हाथ रखा तो जिस्म ठंडा था। जनाबे ज़ैनब ने अवाज़ दी, सज्जाद बेटा! जल्दी आओ, सकीना अपने बाबा के पास जा रही है। इमाम सज्जाद[अ०] जब आए तो देखा कि सकीना रुख़सत हो चुकी थीं, इस दुनिया से जा चुकी थीं।

इस बच्ची की क़ब्र वहीं बनी, उसी क़ैदख़ाने में। ये क़ब्रिस्तान न था, ये क़ैदख़ाना था। अगर कोई क़ैदी मर जाता था, उसका क़ब्रिस्तान अलग था। उसमें जो इस बच्ची की क़ब्र बनी तो शायद इसकी वजह यही है कि कोई जनाज़ा उठाने वाला न था। जब अहलेबैत रिहा होकर जाने लगे तो जनाबे ज़ैनब ने शाम की औरतों से कहा कि बीबियो! हम जा रहे हैं, मैं अपने भाई की एक निशानी छोड़कर जा रही हूँ, जब कभी आना तो इस बच्ची की क़ब्र पर ज़रा सा पानी छिड़क दिया करना।

'इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन'

इस्लाम की नज़र में समाज

■ हुज्जतुल इस्लाम मुजतबा मूसवी लारी

जिस तरह इंसान का जिस्म अलग-अलग पार्ट्स से मिलकर बना है और उन पार्ट्स के बीच एक क़ुदरती ताल्लुक़ होता है उसी तरह समाज भी छोटी-बड़ी फ़ैमिलीज़ से मिलकर बनता है। जब किसी फ़ैमिली के लोगों में युनिटी रहती है तो उससे एक मज़बूत और अच्छा समाज सामने आता है और अगर उन में युनिटी न हो तो समाज का पहिया पूरी तरह नहीं घूम पाता है और टूट कर बिखर जाता है।

इंसान नेचरल तौर पर जिंदा रहना चाहता है और वह अपनी इस ख़ाहिश को पूरा करने के लिए हर तरह की कोशिशें करता रहता है। अपने इस मक़सद में कामयाब होने के लिए सबसे आसान तरीक़े को अपनाता है यानी अपनी नस्ल को बढ़ाता है क्योंकि जब तक इंसानी नस्ल बाक़ी रहेगी, ज़िंदगी भी बाक़ी रहेगी और नस्ल को बढ़ाने के लिए एक फ़ैमिली की ज़रूरत होती है, साथ ही ज़िंदगी की गाड़ी चलाने के लिए पैसे की ज़रूरत होती है।

फ़ैमिली को बनाने की ज़रूरत पड़ने में लोगों के अलग-अलग नज़रिए हैं। कुछ लोगों के ख़याल में फ़ैमिली सिर्फ़ सेक्चुअल डिज़ायर्स को पूरा करने के लिए बनाई जाती है और कुछ लोग जो कारोबारी सोच रखते हैं उनका मानना यह है कि पैसा कमाने के लिए शादी करना और फ़ैमिलीज़ बनाना ज़रूरी है और शादी-ब्याह भी दो ख़ानदानों के बीच एक तरह का कारोबार है। जबकि इस तरह की सोच इस्लाम के बिल्कुल ख़िलाफ़ है।

मोलेर लीवर लिखते हैं कि शादी करने की तीन वजहें होती हैं: 1-पैसा 2-औलाद 3- इश्क़

ये सारी वजहें हर समाज में पाई जाती हैं मगर वक़्त बदलने के साथ-साथ शादी-ब्याह की वजहों में भी बदलाव आता रहा है। पुराने समाजों में पैसे की कमी होने की अहमियत ज़्यादा थी और आज के दौर में इश्क़ की अहमियत ज़्यादा है।

इस्लाम में फ़ैमिली जो कि समाजी पाकीज़गी का बेहतरीन ज़रिया है, की तरफ़ शौक़ पैदा करने के साथ-साथ इंसान की नेचरल ख़्वाहिशों का भी पॉज़िटिव जवाब दिया गया है और शादी-ब्याह को नस्ल को आगे बढ़ाने और नेक औलाद का रास्ता बताया गया है।

इसीलिए कुरआन में इरशाद है, "ख़ुदा ने तुम्हीं में से तुम्हारा जोड़ा बनाया है। फिर उस जोड़े से औलाद और औलाद की औलाद बनाई है और पाकीज़ा रिज़्क़ दिया है।" (1)

इस्लाम ने जवानों को ग़लत रास्ते पर जाने से रोकने के लिए फ़ैमिली के ज़िम्मेदारों पर ज़ोर दिया है कि जवानों की शादी जल्दी से जल्दी करें क्योंकि जो जवान अपनी शादी ख़ुद न कर सकता हो तो कहीं ऐसा न हो कि वह ख़ुद को तबाह कर ले। इसलिए बच्चों की शादी-ब्याह की ज़िम्मेदारी माँ-बाप के सर पर डाल दी है और माँ-बाप को इस इंसानी फ़रीज़े को पूरा करने के लिए ज़रूरत से ज़्यादा ध्यान दिलाया है क्योंकि जल्दी शादी कर देने से बच्चों के अख़लाक़ और ईमान की हिफ़ाज़त हो जाती है। इस्लाम का मानना है कि सैक्चुअल अफ़रा-तफ़री से बचने और अच्छी ज़िंदगी बसर करने के लिए शादी-ब्याह और फ़ैमिली ज़रूरी है।

रसूल[स०] ने एक दिन मिंबर से एलान फ़रमाया, "मुसलमानो! तुम्हारी लड़कियाँ पेड़ों पर पके फलों की तरह हैं जिन्हें अगर वक़्त पर न तोड़ा गया तो उन्हें सूरज की गर्मी बर्बाद कर देगी यानी अगर लड़कियों की नेचरल ख़्वाहिश को पूरा नहीं किया गया और उनकी सही वक़्त पर शादी नहीं की गई तो उनके बीमार होने का ख़तरा है क्योंकि वह भी इंसान हैं और उनकी ज़रूरतों को पूरा करना ही चाहिए।" (2)

इमाम बाक़िर[अ०] के सहाबी, अली बिन इस्बात ने हज़रत को एक ख़त में लिखा, "अच्छे, ठीक-ठाक और सही लड़के हमारी लड़कियों के लिए मिलते ही नहीं। अब बताइए हम क्या करें?" हज़रत ने जवाब दिया, "हर लिहाज़ से अच्छे जवान का इंतेज़ार मत करो क्योंकि रसूल[स०] ने फ़रमाया है कि अगर ऐसे जवान तुम्हारी लड़कियों का हाथ माँगने आएं जो मज़हबी और अख़लाक़ी लिहाज़ से तुम्हें पसंद हों तो अपनी लड़कियों की शादी उनसे कर दो। अगर ऐसा नहीं किया तो अपने लड़के-लड़कियों के भटकने से मुतमइन न रहो। (3)

इस्लाम न सिर्फ़ यह कि शादी-ब्याह में कोई अड़चन पैदा नहीं करता बल्कि इस नेचरल ताक़त से ख़ुद अपने और दूसरों को फ़ायदा हासिल करने के लिए तैयार करता है। शादी-ब्याह से जिस्मानी सुकून के अलावा रूहानी, फ़िक्री और अख़लाक़ी सुकून भी मिलता है क्योंकि जो इंसान परेशानी में होगा या उसके अंदर कोई डर होगा तो वह

कामयाबी तक नहीं पहुँच सकता। इस्लाम की नज़र में यह इंसानी रिश्ता यानी शादी, दिलों का मुक़द्दस रिश्ता है। इसका मतलब यह है कि दोनों सुकून और आराम की ज़िंदगी बसर करें। क़ुरआन में इरशाद है, "उसकी निशानियों में से एक यह भी है कि उसने तुम्हारा जोड़ा तुम्हीं में से पैदा किया है ताकि उससे तुम्हें सुकून हासिल हो और तुम्हारे बीच में मुहब्बत और रहमत पैदा की है कि उसमें ग़ौर करने वालों के लिए बहुत सी निशानियाँ पाई जाती हैं।[4]

फ़ैमिली मिम्बर्स में आपसी रिश्तों को मज़बूत करने के लिए इस्लाम ने कुछ क़ायदे-क़ानून समाज को बताए हैं। और सारी दुनियावी चीज़ों को बिल्कुल अलग रखा है। फ़ैमिली के लोगों में युनिटी को बनाए रखने के लिए हर एक की ज़िम्मेदारी और फ़रीज़े बता दिए हैं ताकि हर इंसान अपने लिहाज़ से अपनी ज़िम्मेदारियों को अदा कर सके।

औरत-मर्द के अलग-अलग कामों के बटवारे के सिलसिले में भी इस्लाम ने बहुत गहरी स्टडी की है। मर्द को कमाई करने के बारे में गाइड लाईन दी गई हैं और औरतों पर बच्चों की परवरिश और घर के कामों की ज़िम्मेदारी सौंपी गई है।

इस्लाम ने औरत पर उसके नेचर के मुताबिक़ ही ज़िम्मेदारियाँ रखी हैं। इस मामले में ज़रा भी ढील नहीं छोड़ी है कि कहीं ऐसा न हो कि उसकी नेचरल सलाहियतें बर्बाद हो जाएं। हाँ! इतना ज़रूर है कि अपने किसी घरेलू और समाजी काम से इतनी छूट दी है कि वह घर से बाहर वाले काम भी कर सकती है। इस बात की इजाज़त बिल्कुल नहीं दी है कि वह दूसरे मर्दों से ग़लत रिश्ते बनाए।

1-सूरए नहल/72, 2-वसाएल, बाब-22, 3-वसाएल, बाब-27, 4-सूरए रूम, 21

इमाम हुसैन[अ०]:

"दोस्त वह है जो तुम्हें बुराई से बचाए और दुश्मन वह है जो तुम्हें बुराईयों का शौक़ दिलाए।"

इमाम सज्जाद[अ०] का अख़्लाक़ और किरदार

पैग़म्बरे ख़ुदा[अ०] की मुबारक नस्ल की ये ख़ुसूसियत थी कि बारह लोग लगातार एक ही तरह के इंसानी कमाल और बेहतरीन अख़लाक़ के साथ दुनिया के सामने आते रहे जिनमें से हर एक अपने वक़्त में दुनिया वालों के लिए बेहतरीन नमूना था। इस सिलसिले की चौथी कड़ी जनाबे सैय्यद सज्जाद[अ०] थे जो अख़लाक़ और किरदार में अपने बुज़ुर्गों की यादगार थे। अगर एक तरफ़ सब्र और बर्दाश्त का जौहर वह था जो करबला के आइने में नज़र आया तो दूसरी तरफ़ शराफ़त और बख़्शिश की सिफ़त अपनी ऊँचाईयों पर थी। आप अलग-अलग मौक़ों पर अपने ख़िलाफ़ सख़्त कलामी करने वालों से जिस तरह पेश आए हैं उस से साफ़ ज़ाहिर है कि आप उस कमज़ोर इन्सान की तरह नहीं थे जो डर कर और अपने को मजबूर समझकर बर्दाश्त से काम ले बल्कि आप सामने वाले को माफ़ करते हुए अपने अमल से उसकी मिसाल पेश करते थे। एक शख़्स ने आप से बहुत सख़्त लहजे में बात की और बहुत से ग़लत अलफ़ाज़ आपके लिए इस्तेमाल किये। हज़रत ने फ़रमाया, "जो कुछ तुम ने कहा है अगर वह सही है तो ख़ुदा मुझे माफ़ करे और अगर ग़लत है तो ख़ुदा तुम्हें माफ़ कर दे। इस बुलन्द अख़लाक़ी का ऐसा असर पड़ा कि उसने सर झुका दिया और कहा कि हक़ीक़त ये है कि जो कुछ मैंने कहा वही ग़लत था। ऐसे ही एक और मौक़े पर एक शख़्स ने आपकी शान में बहुत ही ग़लत अलफ़ाज़ इस्तेमाल किए। हज़रत ने इस तरह बेतवज्जोही की कि जैसे कुछ सुना ही नहीं। उसने पुकार कर कहा कि मैं आपको ही कह रहा हूँ। ये इशारा था क़ुरआन के हुक्म की तरफ़ यानि माफ़ करने को इख़्तियार करो, अच्छे कामों की हिदायत करो और जाहिलों से बेतवज्जोही इख़्तियार करो।

एक शख़्स था हिशाम इब्ने इस्माईल जिसने हज़रत[अ०] की शान में कुछ ग़लत बातें कही थीं। ये ख़बर बनी उमैय्या के एक नेक बादशाह उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ तक पहुँची। उसने हज़रत को लिखा कि मैं उस को सज़ा दूँगा। आपने फ़रमाया कि मैं नहीं चाहता कि मेरी वजह से उसको कोई नुक़सान पहुँचे।

आपके अंदर लोगों की मदद करने का जज़्बा ऐसा था कि रातों को ग़ल्ला और रोटियाँ अपनी पीठ पर रख कर ग़रीबों के घरों पर ले जाते थे और बांटते थे। बहुत से लोगों को ख़बर भी नहीं होती थी कि ये सब कौन दे जाता है। जब आपकी शहादत हुई उस वक़्त उन्हें पता चला कि ये इमाम ज़ैनुलआबिदीन[अ०] थे जो उनकी मदद किया करते थे। अमल की इन ख़ूबियों के साथ आपका इल्म भी ऐसा था जो दुश्मनों को भी सर झुकाने पर मजबूर कर देता था और उन सबका मानना था कि आपके ज़माने में आपसे बड़ा कोई आलिम नहीं है। इन सारी ज़ाती बलन्दियों के साथ आप दुनिया को ये पैग़ाम भी देते थे कि बड़े ख़ानदान से होने पर नाज़ नहीं करना चाहिए।

दिल की आँख

हमारे चेहरे पर दो आँखें हैं जो दुनिया को देखने के लिए दो खिड़कियों की तरह हैं।

इन आँखों के अलावा एक दिल की आँख है जिसका दरवाज़ा रूहानी दुनिया की तरफ़ खुलता है, ये दुनिया जो इंसान की रूह में बसती है।

हातिफ़ ने क्या ख़ूब कहा है, ''अपने दिल की आँखें खोलो ताकि जो ज़ाहिरी आँखों से नहीं देखा जा सकता वह भी देख सको।''

ये दुनिया! ये दुनिया क्या है?यूँ तो दुनिया खेल के मैदान की तरह है जिसमें खेला जाने वाला खेल आख़िरकार ख़त्म हो जाता है लेकिन ज़िंदगी कोई खेल नहीं है।

ज़िंदगी की क्लास में हर एक को सिर्फ़ एक बार ही एडमीशन मिलता है और एक बार ही उसका इम्तिहान लिया जाता है और हम इस वक़्त क्लास ही में तो बैठे हैं या हम इस दुनिया को खेल का एक बहुत बड़ा मैदान ख़याल कर सकते हैं जहाँ सब एक दूसरे के दोस्त हैं और सब एक मुक़ाबले में हिस्सा ले रहे हैं।

इस मैदान में हर आदमी कुछ न कुछ कर रहा है।

लेकिन! क्या ये सब लोग अपने मक़सद तक भी पहुँच रहे हैं?

क्या दौड़ में हिस्सा लेने वाले सब लोग जीत भी जाते हैं?

नहीं बिल्कुल नहीं!

क्योंकि जीतता सिर्फ़ वही है जो सही दौड़े और तेज़ दौड़े।

यहाँ पर भी जीत सिर्फ़ उन्हीं की होती है जो अपनी ज़ात और अपने मक़सद को पहचानें और उस मक़सद को हासिल करने के लिए अपनी सारी अच्छाईयों को सामने लाएं, उन लोगों की तरह जिन्होंने अपनी कुछ रोज़ की ज़िंदगी को पाकीज़गी और नेकनामी से गुज़ारा और ऐसे ही लोगों की ज़िंदगी को 'हयाते तैय्यबा' का लक़ब मिला। जिस बाग़ में निजात और पाकीज़गी के फूल खिलते हैं, वह हमेशा महकता रहता है।

ये तो दुनियादार लोग ख़ुद भी जानते हैं अगरचे ज़बान पर लाने से शरमाते हैं कि रूह का आराम व सुकून ईमान और रूहानियत की ज़िंदगी ही में है।

'गुनाह' अख़लाक़ी गिरावट का वायरस है, जिसके लिए 'ख़ुदा का डर' एंटी बायोटिक है।

हम और आप ऐसे दायरे में रहते हैं और देख रहे हैं कि जब निगाहें हवस का दरिया बन जाएं तो गुनाह की कश्ती उसमें चलने लगती है। ऐसे में बेहिजाबी ओर बेशर्मी उसके लिए चप्पुओं का काम देती है।

अफ़सोस तो उन औरतों और लड़कियों पर है जो ख़ुद को इतनी कम क़ीमत जान लेती हैं कि सिर्फ़ एक मुस्कुराहट, एक वादे और आँख के इशारे के बदले ख़ुद को बेचने पर तैयार हो जाती हैं। क्या उन्हें नहीं मालूम कि ''पाकीज़गी और पाकदामनी'' का फूल तो ''हिजाब'' ही के बाग़ में उगता है। हिजाब ''पाकीज़गी और पाकदामनी'' के फूल के लिए एक घेरा है, एक क़िला है लेकिन जो लड़कियाँ इन हवस भरी निगाहों की परवाह नहीं करतीं वह इसका नतीजा भी देख लेती हैं क्योंकि ''पाकीज़गी'' के चोर हमेशा ''बेहिजाबी'' की दीवार फ़लांग कर ही आते हैं और आसानी से हया और पाकीज़गी पर डाका डाल देते हैं।

इस बीच दीन की कोशिश ये रहती है कि इंसान की आँखें खोल दे, ज़ाहिरी आँख नहीं बल्कि दिल की आँख ताकि उसे सीधा रास्ता नज़र आने लगे और वह अपने इल्म और बसीरत की रौशनी में अपना रास्ता तै कर सके।

हम अपनी ज़ाहिरी आँखों और कानों के बावजूद ''अंधे'' और ''बहरे'' क्यों बने हुए हैं?

सिर्फ़ इसलिए कि हमारी दिल की आँख बंद है।

क्यों न हम ज़िंदगी के मुश्किल रास्ते में ''दीन'' का हाथ थाम लें और रूहानियत के बाग़ में कुछ देर चहलक़दमी करें क्योंकि हमारी रूह ताज़ा आबो हवा की मोहताज है ताकि किसी का बदन इस दुनिया की ज़हर भरी हवा से इंफ़ेक्शन का शिकार न हो जाए।

और फिर जब हम अपनी आँखों पर हक़ीक़त की ऐनक लगाकर देखेंगे तो हर तरफ़ नूर ही नूर नज़र आएगा।

तो फिर हम इस रूहानी और नूरानी वादी से इतना दूर क्यों हैं? आख़िर क्यों? है किसी के पास इसका जवाब? ●

माँ की ज़िम्मेदारियां

■ मिसेज़ क़मर अब्बास

इंसान को ख़ुदा ने बेशुमार नेमतें दी हैं मगर इन में से कुछ इतनी अज़ीम हैं कि इंसान सारी ज़िंदगी अगर सजदे में गुज़ार दे तो उसका शुक्र अदा नहीं कर सकता। उन्हीं में से एक अज़ीम नेमत अल्लाह तआला ने इंसान को माँ की सूरत में अता की है।

'माँ' लफ़्ज़ जिसको सुनते ही एक सुकून का... प्यार का...मुहब्बत का एहसास पैदा होता है, हक़ीक़त में ये ख़ुदा की तरफ़ से उस मुहब्बत की एक हल्की सी झलक है जो ख़ुदा अपने बंदों से करता है। ज़रा ख़याल तो कीजिए, एक माँ अपनी औलाद की परवरिश के लिए क्या-क्या जतन करती है, क्या-क्या मुश्किलें, कितने सदमे और कितनी परेशानियां उठाती है। माँ की तकलीफ़ और परेशानियों का ज़माना उस वक़्त से ही शुरु हो जाता है जब इंसान माँ के पेट में होता है। रिवायतों में मिलता है कि इंसान अगर सारी ज़िंदगी भी माँ की ख़िदमत में गुज़ारे तो ये उस एक करवट का भी बदला नहीं हो सकता जो माँ इस एहतियात से बदलती है कि कहीं मेरे पेट में जो बच्चा है, उसे कोई तकलीफ़ न पहुँच जाए।

जब माँ की एक करवट का बदला नहीं हो सकता तो उसकी बाक़ी ज़िंदगी की ख़िदमतों का इंसान कैसे हक़ अदा कर सकता है। शायद यही वजह थी कि अपनी बूढ़ी माँ को कंधों पर उठाकर तवाफ़ करवाते हुए एक शख़्स ने अल्लाह के रसूल[ﷺ] से पूछा, "ऐ अल्लाह के रसूल! क्या मैंने अपनी माँ का हक़ अदा कर दिया?" तो आपने इरशाद फ़रमाया, "नहीं! ये तो उसकी एक चीख़ जो तुम्हारी पैदाईश के वक़्त उसके मुँह से निकली थी, उसका भी बदला नहीं है।"

एक बड़ा सेहतमंद ख़ूबसूरत नौजवान रसूल[ﷺ] की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और बोला, "ऐ अल्लाह के रसूल! मुझे जिहाद का बहुत शौक़ है ताकि ख़ुदा की राह में अपनी जवानी फ़िदा कर दूँ मगर मेरी एक बूढ़ी माँ है जो इस बात से नाराज़ होती है।" आप[ﷺ] ने फ़रमाया, "ऐ नौजवान लौट जाओ अपनी माँ के पास। क़सम है उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है, तुम्हारा एक रात अपनी माँ के पास रहना और उसकी मुहब्बत का सबब बनना, एक साल ख़ुदा की राह में जिहाद करने से बेहतर है।" क्योंकि ये उम्र का वह हिस्सा है जिसके बारे में क़ुरआन सूरए बनी इस्राईल की आयत 23 में कहता है, "अगर तुम्हारे सामने उनमें से कोई एक या दोनों बूढ़े हो जाएं तो ख़बरदार उन से उफ़ भी न कहना..."

जब वह बुढ़ापे की दहलीज़ पर जा पहुँचें कि जहाँ हो सकता है वह अपनी ज़रूरतें पूरी करने के लिए भी आपके मोहताज हों, अपने बिस्तर से उठने-बैठने के लिए आपके सहारे के मोहताज हों तो ये वह वक़्त है कि जहाँ औलाद की एक बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी शुरु हो जाती है। इन हालात में देखना चाहिए कि क्या वह अपने माँ-बाप को रहमत की वजह समझते हैं या तकलीफ़ की। ये बहुत नाज़ुक वक़्त होता है जहाँ इंसान दिन भर का थका हारा काम से वापस आए और फिर उनकी ख़िदमत को अपने लिए इज़्ज़त और निजात समझे।

अगर माँ-बाप ने ख़ास कर माँ ने औलाद की सही परवरिश न की हो, इस्लामी बातें उसे न बताई हों, अहलेबैत को न पहचनवाया हो, क़ुरआन की तालीम न दिलवाई हो तो औलाद माँ-बाप के मुक़ाम को नहीं समझ सकती और न उस से ख़िदमत की उम्मीद रखी जा सकती है क्योंकि ये इस्लामी टीचिंग्स

ही तो हैं जो उसे ये बताती हैं कि आज अगर तुम्हें अपने माँ-बाप की बुढ़ापे में ख़िदमत करनी पड़ रही है तो याद रखो कि कल तुम भी पैदा होने के बाद उठ नहीं सकते थे, न बैठ सकते थे, न खा सकते थे और न पी सकते थे। न अपने पेशाब-पाख़ाने पर तुम्हें कंट्रोल था, यही माँ थी जिसने अपना सुख-चैन, दिन का आराम, रातों की नींद को सिर्फ़ तुम्हारे लिए क़ुरबान कर दिया था। ख़ुद गीले पर सोई लेकिन बीमारी से बचाने और पुरसुकून नींद देने के लिए तुम्हें ख़ुश्की पर लिटाया, ख़ुद मैला लिबास पहना मगर तुम्हें साफ़ सुथरा पहनाया। ख़ुद परेशान रही मगर तुम्हारे सुकून का ख़याल रखा। नींद ख़राब होती रही मगर तुम्हारा पेट भरा। आज अगर उसे हमारे सहारे की ज़रूरत है तो हमें कम से कम इन दिक़्क़तों को याद करके उसकी ख़िदमत को अपने लिए इज़्ज़त की बात समझना चाहिए।

ऐसे मौक़े पर अगर इंसान माँ-बाप को बोझ समझने लगे और उनकी ख़िदमत के बजाए उन्हें बुरा-भला भी कहने लगे तो ख़ुदा के नज़दीक ये आक़ होने की वजह बन सकती है और याद रहे कि माँ या बाप का आक़ किया हुआ इंसान जन्नत में जाना तो दूर, जन्नत की ख़ुश्बू को भी नहीं सूँघ सकता।

एक मोमिन के रोंगटे खड़े कर देने के लिए यही काफ़ी है कि माँ-बाप की तरफ़ ग़ुस्से से घूर कर देखना भी माँ-बाप के आक़ करने की वजह बन सकता है।

यहाँ तक कि इंसान माँ-बाप के मरने के बाद माँ-बाप का आक़ किया हुआ क़रार दिया जा सकता है, अगर उन्हें भूल जाए या उनके लिए सदक़ा-ए-जारिया न बने या उनके लिए दुआ व इस्तेग़फ़ार न करे या उनकी तरफ़ से सदक़ा न दे।

माँ की ज़िम्मेदारियाँ

मगर इन सारी बातों में जो ख़ास बात है वह ये कि जिस ख़ुदा ने औलाद को ये हुक्म दिया है कि माँ-बाप के आगे उफ़ न करो, ग़ुस्से से न देखो, अदब से उनके सामने बैठो, उनकी ख़िदमत को राहे ख़ुदा में जिहाद से अफ़ज़ल बताया है, उसी ने कुछ ज़िम्मेदारियाँ माँ-बाप पर भी लगाई हैं। ख़ासकर माँ पर क्योंकि नेचरली औलाद उस से ज़्यादा क़रीब होती है।

माँ का फ़र्ज़ है कि औलाद की सही इस्लामी परवरिश करे ख़ासकर मीडिया के इस दौर में कि जिसमें औलाद को शैतानी सोच और बातों से महफ़ूज़ रखना, डिश कल्चर से बचाना जो उनके ईमान के लिए बहुत ख़तरनाक स्लो प्वाइज़न है जो कुछ ही दिनों में नौजवानों के जिस्म व रूह को कमज़ोर कर देता है।

याद रखिए! इस माहौल से अपनी औलाद को बचाना बहुत मुश्किल ज़रूर है मगर नामुमकिन नहीं है। ये माँ का फ़रीज़ा है क्योंकि आम तौर पर बाप सारा दिन काम काज के सिलसिले में बाहर रहता है लेहाज़ा माँ की ज़िम्मेदारी है कि बच्चों को देखे कि उनकी दोस्ती किन के साथ है, कैसे माहौल में उनका उठना बैठना है, किस के यहाँ आना जाना है क्योंकि अच्छे और दीनदार दोस्त से बढ़कर इंसान के लिए कोई और चीज़ मददगार नहीं होती।

दोस्त अगर दीनदार न हो, बुराईयों में फंसा हो, बदकिरदार हो तो उस से आपकी औलाद भी बची हुई नहीं रह सकेगी। इसलिए माँ को चाहिए कि औलाद को इस से पहले कि शैतान की पैरोकार बने वह उन्हें दीन का पैरोकार बना दे। उन्हें क़ुरआन व

अहलेबैत की सीरत की तालीम दिलवाए, अहलेबैत के किरदार का पाबंद बना दे, इससे पहले कि वह बेहूदा और बेकार ड्रामे और फ़िल्में देखने के आदी बन जाएं क्योंकि फिर उनसे ख़ुदा की इताअत और माँ-बाप की ख़िदमत की भी उम्मीद नहीं रखी जा सकती।

आज के दौर में हम अपने बच्चों को इस्लामी फ़िल्मों और ड्रामों की आदत डाल सकते हैं। अगर हम अज़ान के वक़्त ख़ुद भी मुसल्ला बिछा दें और बच्चों को भी शौक़ दिलाएं, ख़ुद भी क़ुरआन की तिलावत करें और बच्चों से भी करवाएं और इन सब से बढ़कर हलाल रोज़ी ख़ुद भी खाएं और बच्चों को भी खिलाएं तो ये बच्चे न सिर्फ़ ये कि शैतान का लश्कर नहीं बनेंगे बल्कि इमामे ज़माना के सिपाही बन जाएंगे और ख़ुद जनाबे सैय्यिदा भी ऐसी माँ पर फ़ख़्र करेंगी।

तारीख़ में ऐसी बेशुमार माएं मौजूद हैं जिन्होंने समाज को अज़ीम इंसान अता किए हैं। कहीं अल्लामा मजलिसी, कहीं अल्लामा हिल्ली, कहीं इमाम ख़ुमैनी, कहीं आयतुल्लाह ख़ामेनई और कहीं आयतुल्लाह सीस्तानी जैसी शख़सियतें नज़र आती हैं। ये सब माँ की परवरिश का नतीजा हैं जिन्होंने दीनदारी को अपने दूध में पिलाकर परवान चढ़ाया।

इसलिए माँ की अज़मत के साथ उसकी ज़िम्मेदारी भी बहुत ख़ास है और ज़रा सी भूल औलाद की ख़राबी में बड़ा रोल अदा कर सकती है, ख़ासकर ग़िज़ा के हवाले से एक छोटा सा वाक़िआ हम सबके लिए एक सबक़ है और इस वाक़िए को सामने रखकर हम सबको देखना चाहिए कि हम अपनी इस ज़िम्मेदारी को कितना पूरा करते हैं।

कई उलमा ने इस वाक़िए को नक़ल किया है कि नजफ़ में काफ़ी अरसे पहले एक बड़े मुत्तक़ी और परहेज़गार आलिम के पास एक मशकी जो पहले ज़माने में पानी सप्लाई करते थे, आया और कहा कि आपके बच्चे ने मेरी मश्क में सूराख़ कर दिया है। ये मश्क मेरे रोज़गार का ज़रिया थी। उस आलिम को बहुत ताज्जुब हुआ कि मैंने सारी ज़िंदगी अपने बच्चे को कोई हराम चीज़ नहीं खिलाई तो फिर ये काम उसने क्यों किया। इसलिए उन्होंने घर आकर अपनी बीवी से सवाल किया कि तुम बताओ मैंने हर तरह से बच्चे की परवरिश का ख़याल रखा है, इसने आज ये हरकत क्यों की?

बीवी ने कहा कि मैंने भी सारी उम्र इसका हर तरह से ख़याल रखा है। कोई नाजायज़ चीज़ न ख़ुद खाई और न इसे खाने दी। मगर काफ़ी सोच विचार के बाद उसने बताया कि एक दिन बाज़ार से गुज़रते हुए मैंने अनार की दुकान से अनार की क़ीमत पूछी। उसी बीच मैंने दुकानदार से पूछे बिना अनार में सूई चुभोकर थोड़ा सा रस चख लिया था जिसका असर आज इस बच्चे से ज़ाहिर हुआ है।

तो ऐ मेहरबान माँ होशियार! ज़रा सी भूल और ग़लत हरकत बच्चे की परवरिश पर कितना गहरा असर डालती है।

ख़ुदा हमें अपनी ज़िम्मेदारियों को पूरा करने ख़ासकर माँ-बाप का फ़रमांबरदार बनने और उनकी ख़िदमत को निजात का ज़रिया समझने की तौफ़ीक़ इनायत फ़रमाए और माओं को भी औलाद को ख़ुदा की इताअत करवाने वाला और फ़रमांबरदार बनाने की तौफ़ीक़ इनायत फ़रमाए।

नफ़्स की पाकीज़गी

■ आयतुल्लाह इब्राहीम अमीनी

ख़ुद को पाक और पाकीज़ा बनाने के लिए हमें तीन काम करना ज़रूरी हैं:

1- ग़लत अक़ीदे, ग़लत सोच और ख़ुराफ़ात से ख़ुद को पाक करना।

2- बुरे अख़लाक़ और बुराईयों से ख़ुद को पाक करना।

3- गुनाहों और बुराई को छोड़ना।

ख़ुराफ़ात और ग़लत अक़ीदे खुली हुई जिहालत और नादानी हैं। यह इंसान की रूह को दाग़दार कर देते हैं, सीधे रास्ते और ख़ुदा से दूर कर देते हैं। ग़लत अक़ीदा रखने वाले ख़ुदा तक नहीं पहुँच पाते। इसलिए वह गुमराही में डूब जाते हैं और जो ख़ास मक़सद है उस तक नहीं पहुँच पाते, जो रूह गुमराह हो उस पर ख़ुदा का नूर कैसे पड़ सकता है? इसी तरह बुरे अख़लाक़ इंसानी रूह को हैवानियत की तरफ़ ले जाते हैं। ऐसा इंसान ख़ुदा तक और कमाल तक भी नहीं पहुँच पाता, अगर इसी तरह गुनाहों को करता रहता है तो उसकी रूह में इंसानियत ख़त्म होकर रह जाती है जिसकी वजह से वह ख़ुदा से दूर हो जाता है और कामयाबी तक नहीं पहुँच पाता। इसलिए ख़ुद को पाक करना हमारे लिए बहुत ज़रूरी है। इसके लिए सबसे पहले हमें बुरे अख़लाक़ और गुनाहों को पहचानना चाहिए। तब फिर इसके बाद अमल के अंदर क़दम रखें और अपनी रूह को पाकीज़ा बनाएं। पहली स्टेज, बुरे अख़लाक़ और गुनाहों को पहचानने में हमें कोई मुश्किल सामने नहीं आती है क्योंकि ख़ुदा के भेजे हुए पैग़म्बरों और इमामों ने अच्छी तरह से एक-एक गुनाह और गुनाहों के बारे में बताया है और उनका इलाज करना भी बताया है। हम इन सब नाफ़रमानियों बुराईयों को जानते और पहचानते हैं, निफ़ाक़, ग़ुरूर, जलन, कीना, ग़ुस्सा, चुग़लख़ोरी, ख़यानत, ख़ुद पसंदी, दूसरों का बुरा चाहना, शिकायत करना, इल्ज़ाम लगाना, बुरा-भला कहना, गंदी ज़बान, गर्म मिज़ाजी, ज़ुल्म, भरोसा न करना, डरना, कंजूसी, लालच, ऐब निकालना, झूठ बोलना, दुनिया की मुहब्बत, लीडरशिप की चाहत, दिखावा, धोखा देना, बहानेबाज़, बदगुमानी, पत्थर दिल होना, कमज़ोर इरादे का मालिक होनाा। इनके अलावा और भी दूसरी बुराईयाँ हैं जिन्हें हमारी फ़ितरत या हमारा नेचर भी बुरा समझता है। सैकड़ों रिवायतें और आयतें इन बुराईयों को बुरा बता रही हैं। बिल्कुल उसी तरह जिस तरह सारी हराम चीज़ों और गुनाहों के बारे में, उनके अज़ाब, उनकी सज़ा, क़ुरआन और हदीसों में मौजूद हैं। अक्सर हम सबको जानते हैं इसलिए बुरे अख़लाक़ और गुनाहे कबीरा व सग़ीरा की पहचान में हमें कोई मुश्किल पेश नहीं आती। इसके बावजूद भी हम नफ़्स के क़ैदी हैं और अपने नफ़्स को गुनाहों और बुरे अख़लाक़ से पाक करने की कोशिश नहीं करते। यही बुनियादी मुश्किल है जिसका इलाज हमें सोचना चाहिए। मेरी नज़र में इसके दो ख़ास रिसोर्स हैं। पहला यह कि हम अपनी अख़लाक़ी बीमारियों को नहीं पहचानते और ख़ुद की अख़लाक़ी बीमारी को हल्का और छोटा समझते हैं और उसके बुरे और दर्दनाक अंजाम के बारे में नहीं सोचते हैं इसीलिए तो उसका इलाज करने की कोशिश नहीं करते। यही वह दो ख़ास रिसोर्स हैं जिनकी वजह से हम अपने अंदर सुधार लाने की कोशिश नहीं करते और अपने नफ़्स को पाक व पाकीज़ा नहीं कर पाते।

अख़लाक़ी बीमारियां

आमतौर पर हम सभी अख़लाक़ी बीमारियों को पहचानते हैं और उनके बुरा होने को भी मानते हैं लेकिन यह बुराईयां हमें दूसरे के अंदर जल्दी दिख जाती हैं और अपने अंदर नज़र ही नहीं आतीं। अगर हम किसी दूसरे में बुरे अख़लाक़ को देखते हैं तो उसकी बुराई को अच्छी तरह जान लेते हैं। हो सकता है कि यही बुराई उससे भी ज़्यादा हमारे अंदर पाई जाती हो मगर हम उसकी तरफ़ बिल्कुल ध्यान नहीं देते। जैसे कि दूसरों के राइट्स पर हमला करने को हम बुरा समझते हैं और ऐसा करने वाले से नफ़रत करते हैं। दूसरी ओर हो सकता है कि हम दूसरों के राइट्स को पामाल कर रहे हों लेकिन इसे बिल्कुल नहीं समझते बल्कि अपने ऐसे काम को ग़लत भी नहीं समझते और उसके बावजूद हम अपनी निगाह में इसे बहुत अच्छा काम और अच्छे अख़लाक़ वाला समझते हैं। यही हाल दूसरी बहुत सी बुराईयों का भी हो सकता है और इसी तरीक़े से हम ख़ुद को मुतमइन कर लेते हैं जिसकी वजह से हम कभी अपने अंदर सुधार के बारे में नहीं सोच पाते हैं।

अगर कोई बीमार ख़ुद को बीमार न समझे तो वह अपना इलाज नहीं करता है। ठीक इसी तरह हम अपने अंदर अख़लाक़ी बीमारियों को बीमारी नहीं समझते। इसलिए उनका इलाज भी नहीं करते। यही हमारी सबसे बड़ी मुश्किल और परेशानी है। इसलिए अगर हम कामयाबी चाहते हैं तो इस मुश्किल का हल तलाश करना होगा और जिस तरह से भी पॉसिबिल हो, हमें अपनी अख़लाक़ी बीमारियों को पहचानने की कोशिश करना चाहिए।

■ आले हाशिम रिज़वी
युनिटी मिशन स्कूल, लखनऊ

हुसैनी फ़तह का एलान हैं ज़ैनब स०

हर वह शख़्स जिसने ह्यूमन हिस्ट्री की ज़रा सी भी स्टडी की हो वो इस हक़ीक़त को जानता है कि औरतों की मदद के बिना समाज का सुधार और तरक़्क़ी नहीं हो सकती। हम जब ह्यूमन हिस्ट्री की उन अज़ीम तहरीकों पर नज़र डालते हैं जिन तहरीकों ने इंक़ेलाब के नए और बुलंद मेयार क़ायम किए हैं तो मर्दों की तरह ही कुछ ऐसी औरतों के नाम भी उभरकर सामने आते हैं जिनके कारनामे समाजी एतेबार से बड़ी अहमियत और नतीजे वाले हैं। ये वो औरतें हैं जिन्होंने मक़सद तक पहुँचने में अपनी कोशिशों से ज़िंदगी की रूहानियत को बुलंदियों तक पहुँचाया।

दीनी एतेबार से भी अगर देखा जाए तो इसमें कोई शक नहीं रह जाता कि ख़ुदा के मैसेज की तबलीग़ में भी कुछ औरतें बराबर की हिस्सेदार रही हैं। इस्लामी हिस्ट्री भी औरतों के बेमिसाल कारनामों से मालामाल हैं और उन्होंने भी दीन को फैलाने में अपने मरतबे के मुताबिक़ जिस ईसार और क़ुर्बानी का मुज़ाहिरा किया है वह किसी भी क़ौम के लिए एक नमूना है। इन औरतों में जनाबे ज़ैनब[स०] का रोल अपने कारनामों के एतेबार से सब से अलग है और अपनी बुलंदी का भी यक़ीन दिलाता है। इमाम हुसैन की शहादत से आज तक हुसैनी मक़सद को आम करने में जनाबे ज़ैनब[स०] का रोल बिल्कुल साफ़ है।

मुल्के शाम की राजधानी दमिश्क़ के पूरब-दक्षिण में क़रीब सात मील की दूरी पर एक मज़ार है उसके मीनार जो काफ़ी दूर ही से नज़र आने लगते हैं, हमें बताते हैं कि यह वो मुक़द्दस जगह है जहाँ वो बीबी आराम कर रही हैं जो एक शेरदिल ख़ातून है, जिन्होंने औरतों के वक़ार को ऊँचाईयों पर पहुँचा दिया। यह बीबी जनाबे फ़ातिमा ज़हरा[स०] और हज़रत अली[अ०] की साहबज़ादी और पैग़म्बरे इस्लाम हज़रत मुहम्मद[स०] की दो नवासियों में से बड़ी नवासी हैं। जिन्हें किरदार, अख़लाक़, इल्म, अमल, पाकीज़गी और शराफ़त में जनाबे फ़ातिमा ज़हरा[स०] का वारिस और जानशीन माना जाता है।

जनाबे ज़ैनब ने एक आम ख़याल को भी अपनी स्ट्रेटजी से ग़लत साबित कर दिया कि औरतों में युनिटी और समाज से जुड़ने की सलाहियत नहीं होती। करबला की दिल को दहला देने वाली शहादतों के बाद बराबर दर्दनाक मसाएब को बर्दाश्त करती जनाबे ज़ैनब ने उन मज़बूत दिल वाली औरतों के दस्ते की क़यादत ख़ुद फ़रमाई। इस शेरदिल बेटी ने अपने दो बेटों को अल्लाह की राह में क़ुरबान कर दिया। अपने अज़ीज़ तरीन भाई इमाम हुसैन[अ०] को शहीद होते देखा। इसके बाद भी जिन हालात का सामना किया उनको इन चार लाईनों से बख़ूबी समझा जा सकता है।

करबला की प्यास में ख़ूने जिगर पीना पड़ा
चाक दिल को आँसुओं के तार से सीना पड़ा
मरने वाले भी यक़ीनन कर गए कारे अज़ीम
पूछिए उनसे जिन्हें हर हाल में जीना पड़ा

जनाबे ज़ैनब ने इस बात को भी ग़लत साबित कर दिखाया कि मर्दों को औरतों पर पूरा-पूरा कंट्रोल हासिल है। इब्ने ज़ियाद और यज़ीद जैसे ज़ालिम जनाबे ज़ैनब की हिम्मतों, बहादुरी और सब्र का जवाब नहीं ला सके और न ही उन पर क़ाबू पा सके। वो ऐसी शख़्सियत थीं जिन पर क़ाबू पाना नामुमकिन था। शेरे ख़ुदा की शेरदिल बेटी को डराना यज़ीदी हुकूमत के बस की बात नहीं थी। उन्होंने करबला से शाम तक हुसैनी मक़सद लोगों को न सिर्फ़ बताया, बल्कि यज़ीद के दरबार में ख़ुतबा देकर उसकी हार और हुसैनी फ़तह का एलान भी कर दिया।

हैदरी आन-बान हैं ज़ैनब
हुसैनी फ़तह का एलान हैं ज़ैनब

अज़ादारी हिस्टरी में

■ मिर्ज़ा सरदार हुसैन

मोहर्रम के आते ही कुछ लोग अज़ादारी या उसके अलग-अलग तरीक़ों पर सवाल और एतेराज़ करना शुरु कर देते हैं। यही वह सवाल हैं जो ज़ेहन को अज़ादारी की हिस्टॉरिकल हैसियत जानने की तरफ़ उभारते हैं।

हम हिस्टरी को दो ज़मानों में बाँट सकते हैं: करबला से पहले का ज़माना, और करबला के बाद का ज़माना।

अज़ादारीः करबला से पहले

उस ज़माने में अज़ादारी आजकी अज़ादारी की तरह तो नहीं थी लेकिन ग़म, रंज, गिरया व बुका उसमें भी पाया जाता था। रिवायत में है कि तमाम नबियों का गुज़र इस करबला से हुआ और जो भी नबी इस जगह से गुज़रे किसी न किसी मुसीबत में ज़रूर घिरे और जब वह ख़ुदा से इसकी वजह पूछते थे तो जवाब आता था कि यहाँ आख़िरी रसूल के नवासे, हुसैन[अ०] को शहीद किया जाएगा।

हज़रत आदम[अ०] ज़मीन पर हज़रत हव्वा की तलाश में फिर रहे थे। करबला से जैसे ही उनका गुज़र हुआ तो दिल बैठने लगा, आँखें भर आईं और जब शहादत की जगह पर पहुँचे तो पैर कांपने लगे और वहीं ज़मीन पर गिर गए जिसकी वजह से ख़ून जारी हो गया। आसमान की तरफ़ देखा और अर्ज़ किया ऐ ख़ुदा! मुझसे कौन सी ग़लती हुई है जिसकी सज़ा मुझे मिली है? मैं सारी ज़मीन को देख आया मगर इतनी मुसीबतों वाली ज़मीन से गुज़र न हुआ। ख़ुदा ने फ़रमाया कि ऐ आदम तुम से कोई गुनाह नहीं हुआ लेकिन तुम्हारे आने वाले बेटे, हुसैन को इस जगह बड़ी बेरहमी से शहीद किया जाएगा। हज़रत आदम ने सवाल किया कि उसका क़ातिल कौन है? वही हुई उसका क़ातिल यज़ीद है जो आसमान व ज़मीन वालों के नज़दीक मलऊन है।

जब आदम ने अपने तर्के औला की तौबा करनी चाही तो जिब्रईल ने उन से कहा कि इस तरह तौबा तलब कीजिए, "या हमीदु बिहक़्क़ि मुहम्मद, या आली बिहक़्क़ि अली, या फ़ातिरु बिहक़्क़ि फ़ातिमा, या मोहसिनु बिहक़्क़िल हसन, या क़दीमुल एहसान बिहक़्क़िल हुसैन।" जैसे ही हुसैन का नाम आपकी ज़बान पर आया तो बेसाख़्ता आँसू आपकी आँखों से जारी हो गए। जिब्रईल से पूछा कि ये पाँचवां नाम क्यों मेरे दिल को तोड़ रहा है और बेइख़्तियार मेरी आँखों से आँसू बहने लगे हैं? जिब्रईल ने करबला के वाक़िए को बयान किया...हिस्टरी कहती है कि आदम और जिब्रईल इस तरह रोए जैसे एक माँ अपने जवान बेटे की मैय्यत पर रोए।

हज़रत नूह की कश्ती दुनिया की सैर के बाद जब करबला पहुँची तो भंवर में फंस गई। नूह[अ०] ने कहा कि ख़ुदाया! कहीं ऐसी मुश्किल पेश नहीं आई यहाँ ऐसा क्यों हुआ? जिब्रईल नाज़िल हुए और कहा कि ऐ नूह! इस जगह हुसैन शहीद होंगे।

हज़रत इब्राहीम जब करबला से गुज़रे तो घोड़ा लड़खड़ाया और आप घोड़े से गिर गए। सर ज़ख़्मी हो गया और ख़ून बहने लगा। आप ने इस्तेग़फ़ार किया और अर्ज़ किया कि ऐ ख़ुदा! मुझ

से कौन सी ख़ता हुई? जिब्रईल नाज़िल हुए और कहा कि आप से कोई ख़ता नहीं हुई लेकिन इस जगह आख़िरी नबी के नवासे हुसैन[अ०] शहीद किए जाएंगे।

हज़रत इस्माईल ने अपनी भेड़ों को फ़ुरात के किनारे चराने भेजा। चराने वालों ने ख़बर दी कि ऐ नबी! भेड़ कई रोज़ से पानी नहीं पीतीं। हज़रत इस्माईल ने ख़ुदा से पूछा तो जिब्राईल नाज़िल हुए और कहा कि ख़ुद भेड़ों से पूछ लीजिए। इस्माईल ने भेड़ों से पूछा तो उन्होंने कहा कि हमें ख़बर मिली है कि आपके बेटे और हज़रत मुहम्मद[स०] के नवासे हुसैन[अ०] इस जगह प्यासे शहीद किए जाएंगे। हम उनके ग़म में यहाँ से पानी नहीं पीते।

हज़रत सुलेमान अपने तख़्त पर बैठे हवा पर सैर में मसरूफ़ थे कि करबला के ऊपर से गुज़र हुआ। हवा ने आपका तख़्त तीन बार इस तरह घुमाया कि हज़रत सुलेमान डर गए कि कहीं गिर न जाएं। हवा ने तख़्त को वहीं पर उतार दिया। सुलेमान ने पूछा कि किस लिए उतार दिया?हवा ने कहा कि ये वह जगह है जहाँ इमाम हुसैन[अ०] शहीद होंगे। सुलेमान ने पूछा कि हुसैन कौन हैं? हवा ने कहा कि हुसैन मुहम्मद मुस्तफ़ा[स०] के नवासे और अली के बेटे हैं।

हज़रत मूसा, यूशा बिन नून के साथ सैर कर रहे थे कि उनका गुज़र करबला से हुआ। अचानक उनके जूते फट गए और काँटा पैर में घुस जाने से ख़ून निकलने लगा। अर्ज़ की ख़ुदावंदे आलम! मुझ से क्या ख़ता हुई है? जवाब आया कि यहाँ हुसैन[अ०] शहीद होंगे। पूछा कि हुसैन कौन हैं?फ़रमाया हुसैन मुहम्मद मुस्तफ़ा[स०] के नवासे और अली के बेटे हैं।

हज़रत ईसा अपने हवारियों के साथ कहीं जा रहे थे कि उनका गुज़र करबला से हुआ। अचानक एक शेर ने उनका रास्ता रोक लिया। हज़रत ईसा आगे आए और शेर से पूछा कि रास्ता क्यों रोका है? शेर ने कहा कि मैं रास्ते से नहीं हटूँगा मगर ये कि इमाम हुसैन[अ०] के क़ातिल को बुरा कहो... हज़रत ईसा ने हाथ उठाए और यज़ीद को बुरा कहा। शेर ने रास्ता छोड़ दिया।

उम्मुल मोमिनीन उम्मे सलमा बयान करती हैं कि एक रात रसूले अकरम[स०] बाहर गए हुए थे और काफ़ी देर के बाद जब घर में वापस आए तो उनका अजीब आलम था, परेशान हाल, धूल में अटे हुए थे और एक हाथ की मुटठी बंधी हुई। मैंने अर्ज़ की कि ऐ अल्लाह के रसूल[स०]! आप का ये क्या आलम है?आपने फ़रमाया कि अभी मुझे इराक़ में करबला ले जाया गया था। वहाँ मेरे बेटे हुसैन और मेरे अहले हरम की शहादत की जगह दिखाई गई। मैंने उनका ख़ून अपने हाथों में समेट लिया है वह ख़ून मेरी मुटठी में है। फिर आपने वह मुटठी मेरी तरफ़ बढ़ा दी और फ़रमाया कि इसे लो और महफ़ूज़ कर लो। मैंने वह लाल मिट्टी ली और एक शीशी में हिफ़ाज़त से रख दी। हुसैन जब कूफ़े की तरफ़ चले तो मैं रोज़ाना उस शीशी को देखती और रोती थी। यहाँ तक कि दस मोहर्रम आ गई। सुबह मैंने वह मिट्टी देखी तो अपनी असली हालत में थी लेकिन जब दिन ढलने लगा तो मैंने देखा वह ताज़ा ख़ून में बदल गई थी। मैंने आहिस्ता-आहिस्ता से रोना शुरु कर दिया ताकि दुश्मन मेरी आवाज़ न सुन सकें यहाँ तक कि ये ख़बर मदीने पहुँच गई।

इसके अलावा हिस्टॉरिकल बुक्स में जंग सिफ़्फ़ीन के सफ़र में अमीरुलमोमिनीन[अ०] का करबला से गुज़र और आपका गिरया और इस सरज़मीन की अज़मत का बयान तफ़सील से मिलता है।

अज़ादारीः करबला के बाद

तारीख़ और हदीसों की किताबों से मालूम होता है कि अज़ादारी ख़ुद मैदाने करबला और रोज़े आशूर ही से शुरु हो गई थी। सैय्यदानियों का शहीदों की लाशों पर रोना मक़ातिल में जगह-जगहा बयान हुआ है ख़ास तौर पर जनाबे रुबाब का अली असग़र पर रोना, जनाबे ज़ैनब का रोना अलमदारे करबला और इमाम हुसैन[अ०] पर और ख़ुद इमाम का दूसरे शहीदों पर रोना। यहाँ हम तारीख़ से इसके दो नमूने पेश कर रहे हैं:

1- इमाम हुसैन[अ०], जनाबे अब्बास के ज़ख़्मी बदन पर तशरीफ़ लाए और सरहाने झुक कर खड़े हो गए। फिर बैठ गए और बहुत रोए यहाँ तक कि हज़रत अब्बास की रूह बदन से जुदा हो गई।

2- इमाम हुसैन[अ०] ने अपने बेटे का सर अपनी गोद में रखा। चेहरे से ख़ून को साफ़ किया। पेशानी को बोसा दिया और फिर फ़रमाया, "बेटा! ख़ुदा तेरे

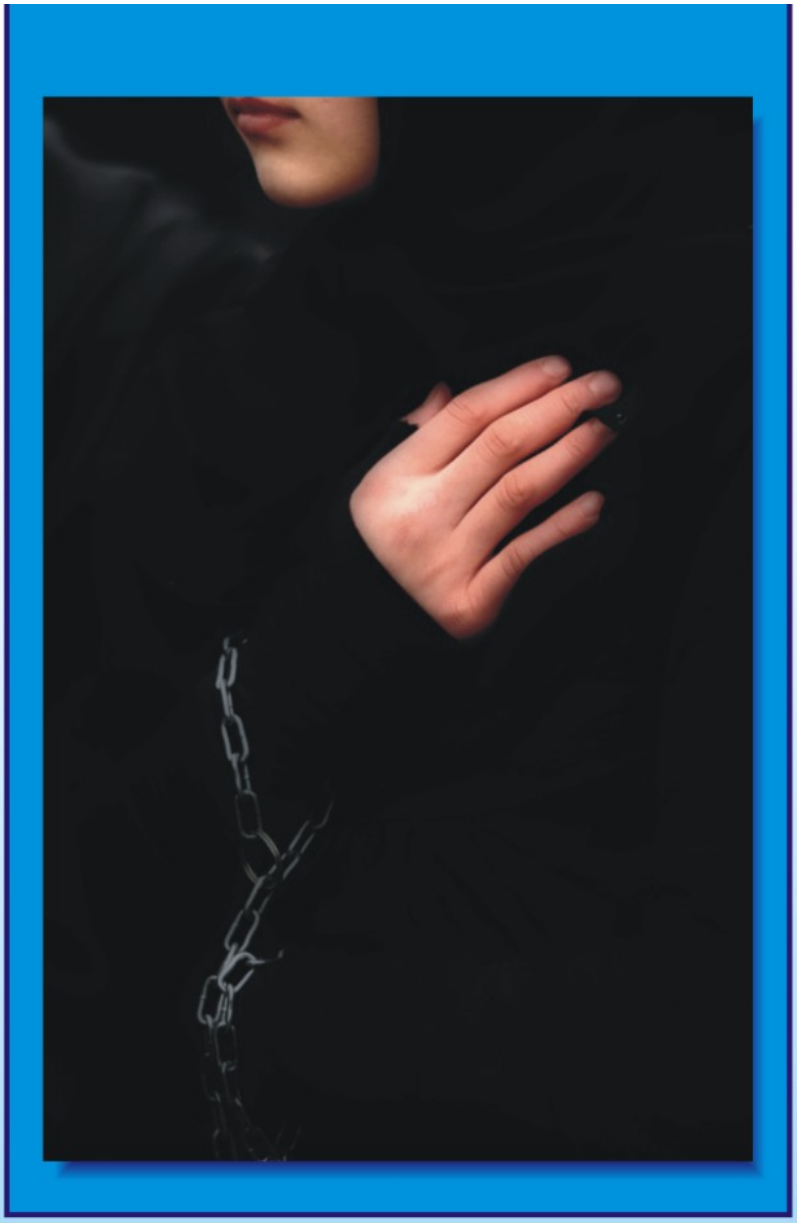

क़ातिलों से अपनी रहमत को दूर रखे। ये कितने गुस्ताख़ हैं कि ख़ुदा व रसूल का भी ख़याल न रखा।'' इस के बाद इमाम की आँखों से आँसू बहने लगे।

करबला के बाद पहली आम अज़ादारी

हज़रत ज़ैनब और हज़रत ज़ैनुलआबिदीन[अ०] के दिलों को हिला देने वाले और दर्द भरे ख़ुतबों ने शाम में वह क़यामत बरपा की कि दरबारे शाम हिल उठा। यज़ीद ने मजबूर होकर अहले हरम को तीन दिन अज़ादारी की इजाज़त दी। ये पहली आम अज़ादारी थी जो इमाम हुसैन[अ०], आपके रिश्तेदारों और सहाबियों के लिए बरपा हुई।

मदीने में अज़ादारी

बशीर जो शायर भी था कहता है कि जब क़ैदियों का क़ाफ़िला मदीने के पास पहुँचा तो हज़रत इमाम ज़ैनुलआबिदीन[अ०] ने मुझे बुलाकर फ़रमाया, ''बशीर मदीने जाकर मदीने वालों को मेरे बाबा की शहादत की ख़बर कर दो''। मैं मदीने में पहुचां और बुलंद आवाज़ से रोते हुए ये शेर पढ़ाः

मदीने वालो! मदीना तुम्हारे रहने के लायक़ नहीं रह गया है।

हुसैन[अ०] क़त्ल कर दिए गए हैं।

ये ख़बर सुनते ही मदीने के बच्चे, बड़े शहर के बाहर आ गए...इसके बाद मदीने में रात-दिन मजालिसे अज़ा बरपा हुईं।

इमाम ज़ैनुलआबिदीन[अ०] की अज़ादारी

ये ग़मज़दा इमाम क्योंकि करबला में मौजूद थे और ज़ुल्मो सितम के चश्मदीद गवाह थे इसलिए हमेशा शोहदाए करबला पर गिरया करते और रोते रहते थे। अगर खाना पेश किया जाता तो आँखों से आँसू जारी हो जाते थे। एक दिन एक ग़ुलाम ने अर्ज़ किया कि मौला! कब तक रोएंगे? आपने कहा, ''वाए हो तुझ पर! याक़ूब के 12 बेटे थे सिर्फ़ एक से बिछड़े थे तो याक़ूब की आँखें ज़्यादा रोने से सफ़ेद हो गई थीं हालांकि यूसुफ़ ज़िंदा थे लेकिन मैंने बाप, भाई, चचाओं, 18 बनी हाशिम और अपने बाबा के सहाबियों को अपनी आँखों के सामने ख़ून में डूबा देखा है। मेरा ग़म कैसे पूरा हो सकता है?''

इमाम सादिक़ ने फ़रमाया, ''मेरे जद्दे बुज़ुर्गवार इमाम सज्जाद[अ०] चालीस साल तक अपने बाप पर गिरया करते रहे।''

इमाम बाक़िर[अ०] की अज़ादारी

मोहर्रम शुरु होते ही अहलेबैत का ग़म शुरु हो जाता था। इमाम शायरों को दावत देते और उन्हें अपने दादा इमाम हुसैन[अ०] के लिए मर्सिया पढ़ने का हुक्म देते थे।

इमाम बाक़िर[अ०] रोज़े आशूरा अज़ादारी का हुक्म देते और अपने घर पर मजलिस बरपा करते थे।

इमाम सादिक़[अ०] की अज़ादारी

इमाम सादिक़[अ०] की अज़ादारी के बारे में कई रिवायतें नक़ल हुई हैं। शायरों को इमाम हुसैन[अ०] के लिए मर्सिया पढ़ने का हुक्म देते थे और मर्सिया ख़्वानी के वक़्त आपके अहलेबैत पर्दे के पीछे गिरया व ज़ारी करते थे।

इमाम काज़िम[अ०] की अज़ादारी

इमाम रज़ा[अ०] फ़रमाते हैं, ''जब मोहर्रम आता था तो मेरे बाबा मुस्कुराना और हंसना छोड़ देते थे... आशूर के रोज़ बहुत ज़्यादा गिरया करते थे और कहते थे कि ये दिन मेरे दादा की शहादत का दिन है।''

इमाम रज़ा[अ०] की अज़ादारी

देबिले ख़ुज़ाई कहते हैं, ''मोहर्रम के शुरु के दिनों में इमाम रज़ा की ख़िदमत में पहुँचा मैंने हज़रत को सहाबियों के बीच इस सूरत में पाया कि आप बहुत ज़्यादा ग़मगीन थे। जैसे ही हज़रत की नज़र मुझ पर पड़ी फ़रमाया कि मरहबा ऐ देबिल! मरहबा उस पर जो हाथ और ज़बान से हमारी मदद करता है। हज़रत ने मुझे अपने पास बिठाया और फ़रमाया कि देबिल क्या शेर पढ़ना चाहते हो? ये दिन हम अहलेबैते रसूल[अ०] के लिए ग़म और हमारे दुश्मनों के लिए ख़ुशी के दिन हैं। फिर हज़रत ने एक पर्दा लगाया। अहलेहरम को पर्दे के पीछे बिठाया ताकि अपने जद्दे बुज़ुर्गवार पर गिरया करें और फिर मेरी तरफ़ देख कर कहा कि देबिल! मर्सिया पढ़ो, तुम हमेशा हमारे मददगार और मर्सिया पढ़ने वाले हो।'' फिर देबिल ने मर्सिया पढ़ा।

बाक़ी चार इमामों की अज़ादारी

अज़ादारी बाक़ी चार इमामों के दौर में कभी किसी हद तक आज़ादी के साथ बरपा हुई और कभी पाबंदियों और सख़्तियों के साथ। इमाम मुहम्मद तक़ी[अ०] के ज़माने में मोतसिम की हुकूमत तक अज़ादारी किसी हद तक आज़ादी के साथ बरपा हुई लेकिन इसके बाद अज़ादारी पर पाबंदियाँ बढ़ गईं।

इमामों की सीरत पढ़ने से मालूम होता है कि साल भर ख़ास दिनों में अज़ादारी जारी रहती थी लेकिन मोहर्रम के दिनों में बाक़ी दिनों से अलग बरपा होती थी। इमाम सज्जाद मोहर्रम में सियाह लिबास पहनते थे।

ख़ुलासा ये कि अज़ादारी ख़िलक़त की शुरुआत

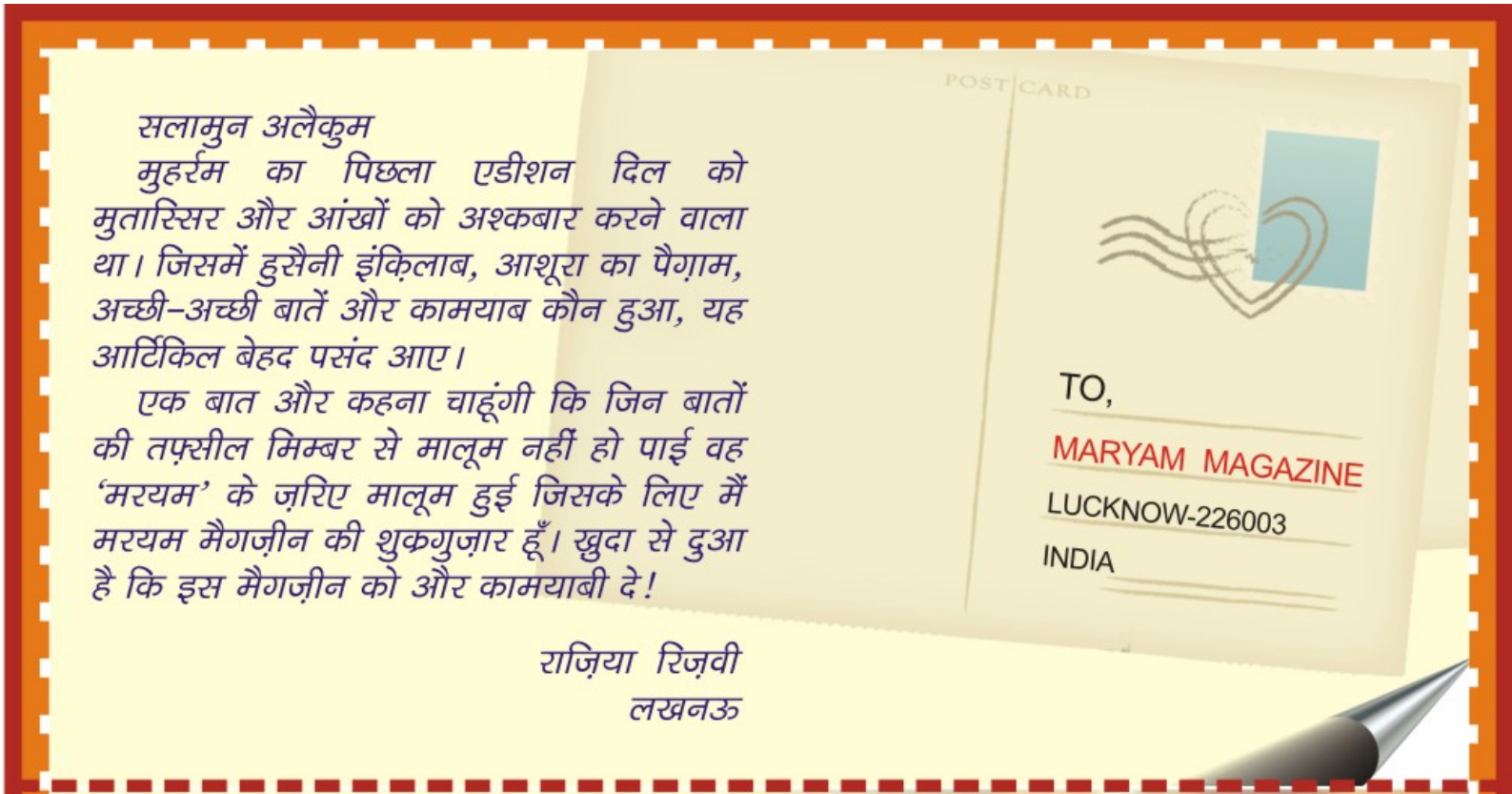

सलामुन अलैकुम

मुहर्रम का पिछला एडीशन दिल को मुतास्सिर और आंखों को अश्कबार करने वाला था। जिसमें हुसैनी इंक़िलाब, आशूरा का पैग़ाम, अच्छी-अच्छी बातें और कामयाब कौन हुआ, यह आर्टिकिल बेहद पसंद आए।

एक बात और कहना चाहूंगी कि जिन बातों की तफ़्सील मिम्बर से मालूम नहीं हो पाई वह 'मरयम' के ज़रिए मालूम हुई जिसके लिए मैं मरयम मैगज़ीन की शुक्रगुज़ार हूँ। ख़ुदा से दुआ है कि इस मैगज़ीन को और कामयाबी दे!

राज़िया रिज़वी
लखनऊ

अस्सलमु अलैकुम

मैंने अपनी एक दोस्त के यहाँ 'मरयम' का पहली बार शादी-ब्याह स्पेशल एडीशन देखा और देखते ही इसकी दीवानी हो गई। फ़ौरन ही यह फ़ैसला किया कि अब सबसे पहले इस मैगज़ीन को सब्सक्राइब कराना है। मैगज़ीन बहुत अच्छी है और एक ऐसी मैगज़ीन की कमी बहुत दिनों से थी जिसको 'मरयम' ने पूरा कर दिया है।

मैं सब्सक्रिप्शन फ़ीस भेज रही हूँ, मुझे प्लीज़ 3 साल का सब्सक्रिप्शन दे दीजिए।

ख़ुदा आप सब को ख़ुश और 'मरयम' को एक ऐसी मैगज़ीन बना दे कि हर तरफ़ इसी का नाम हो।

वस्सलाम
फ़ातिमा
अंधेरी वेस्ट, मुम्बई

से थी और पहले ज़ाकिर जिब्रईल थे और करबला के बाद हर ज़माने में इमामों ने अज़ादारी पर बहुत ज़ोर दिया है ख़ास तौर पर मोहर्रम के दिनों के लिए। इमाम रज़ा ने इब्ने शबीब से फ़रमाया, "शबीब के बेटे! अगर रोना ही है तो हुसैन बिन अली[अ०] पर रोओ क्योंकि उनका सर भेड़ की तरह बदन से जुदा किया गया और १८ बनी हाशिम उनके साथ शहीद किये गए थे।"

इमामे ज़माना ने फ़रमाया है, "ऐ जद्दे बुज़ुर्गवार! मैं सुबह-शाम आप पर रोता रहूँगा और अगर मेरी आँखों के आँसू ख़त्म हो गए तो ख़ून के आँसू रोऊँगा।

अज़ादारी अलग-अलग ज़मानों में हालात के एतेबार से बरपा हुई है। इस्लामी मुमालिक ख़ासकर ईरान, इराक़, शाम यहाँ तक कि हिन्दुस्तान में भी इमामों के दौर से ही शुरु हो गई थी। अज़ादारी को फ़ैलाने में उलमा के रोल को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। इसकी एक मिसाल ये है कि सैय्यद मुर्तज़ा अज़ादारों के बीच नंगे पैर और बिना अमामे के आते थे।

इसके अलावा उलमा का अज़ादारों के बीच मातम करना और नंगे पैर करबला के सफ़र जैसे वाक़िआत पाए जाते हैं जिन्हें यहाँ बयान नहीं किया जा सकता। आख़िर में ख़ुदावन्दे आलम से दुआ है कि वह हमें अपने इमामों के सच्चे चाहने वालों में क़रार दे।

(रिफ़्रेंस बुक्सः बिहारुल अनवार, अश्के रवां, अश्कबारए करबला, अल-मजालिसुन्निया, मोसूअतो कलेमातिल इमामिल हुसैन, तारीख़ुन निहाया, कामिलुज़्ज़ियारात, तारीख़े सैयदुश्शुहदा, नफ़्सुल महमूम)

डूबता सूरज

■ सैय्यद मेहदी मूसवी

आज मदीने का हाल बहुत अजीब है, काफ़ी वक़्त से मदीने में उदासी छायी हुई है। हर तरफ़ आहो बुका के मंज़र नज़र आते हैं। जब से हाजियों का क़ाफ़िला ख़ान-ए-काबा से वापस आया है रसूल[स०] की कमर झुकती जा रही है। ऐसा महसूस हो रहा है जैसे ख़ुदा की तरफ़ से रसूलुल्लाह को इशारा मिल गया है, "ऐ अल्लाह के रसूल! बेशक आपको भी मौत आने वाली है और ये सब भी मर जाने वाले हैं"।[1]

इसी बीच अली[अ०] के कांधों पर हाथ रखे रसूल ने बक़ी के क़ब्रिस्तान का रुख़ किया कि क़ब्रिस्तान वालों के लिए मग़फ़िरत की दुआ करें। धीरे-धीरे क़दम उठाते हुए आप बक़ी में दाख़िल हुए। अपनी मेहरबान निगाह एक-एक क़ब्र पर डाली और सबके लिए दुआ की और फिर किसी गहरी सोच में डूब गए। मुबारक चेहरे पर परेशानी के आसार दिख रहे थे। इसी हालत में कहा कि रात के अंधेरे की तरह फ़ितने उभरने वाले हैं जो इस वक़्त इकटठे हो रहे हैं।' फिर अली[अ०] की तरफ़ देखकर फ़रमाया कि मुझे दुनिया व आख़िरत (के ख़ज़ानों) की चाबियों की पेशकश की गई है। मुझे दुनिया में रहने और ख़ुदा से मुलाक़ात का इख़्तियार दिया गया है और मैंने ख़ुदा से मुलाक़ात को चुन लिया है।"

अली[अ०] ये सुनकर परेशान हो जाते हैं क्योंकि जानते हैं कि हुज़ूर अपनी ज़िंदगी का आख़िरी वक़्त गुज़ार रहे हैं लेकिन ये रसूलुल्लाह[स०] के लिए रंजो ग़म के ख़त्म होने की ख़ुशख़बरी है। इस्लाम के रास्ते में आने वाली मुश्किलों और कड़वे व मीठे वाक़िआत मुसलसल रसूल[स०] की यादों को ताज़ा कर रहे हैं कि किस तरह लोग उनके ऊपर कूड़ा-करकट फेंका करते थे और मिट्टी डाला करते थे। नुबुव्वत का नाम तक उनकी पुरानी कीना परवर तबीअतों में चुभता था। शेबे अबी तालिब के कड़वे दिन आज भी रसूलुल्लाह की आँखों में जिंदा थे। सुमैय्या और बिलाल की दर्दनाक आवाज़ें आज भी रसूलुल्लाह के कानों से टकरा रही थीं।

लेकिन... आज आसमानों पर सारे नबी और वली सफ़ें बाँधे, नबियों के सरदार की आमद का इन्तिज़ार कर रहे थे। फ़रिश्तों की निगाहें रास्ते पर थीं। जिब्रईल, मीकाईल, इस्राफ़ील और इज़राईल ज़मीन से नज़रें नहीं हटा रहे थे। लेकिन इन सारी ख़ुशियों के बाद भी एक अंजाना सा डर रसूलुल्लाह[स०] को घेरे हुए था। मुबारक चेहरे पर परेशानी और ग़म साफ़ नज़र आ रहा था। ऐसा लगता था जैसे इस ज़मीन पर कोई ऐसी हस्ती है जिसके बग़ैर रसूलुल्लाह के लिए यहाँ से जाना बहुत तकलीफ़ देने वाला है। वह दिल का टुकड़ा जो आपकी सारी उम्र की दौलत है। नुबुव्वत के रंजोग़म को जिसने अपनी मुहब्बतों से बर्दाश्त के क़ाबिल बनाया। जब दुश्मनों की तरफ़ से अल्लाह के रसूल[स०] को तकलीफ़ पहुँचायी जाती थी तो उस वक़्त सिर्फ़ और सिर्फ़ फ़ातिमा ज़हरा[स०] ही थीं जो उनकी तकलीफ़ों को दूर करने का ज़रिया थीं। रसूलुल्लाह[स०] अपनी इस जांनिसार बेटी को अकेला छोड़कर आसमानों की तरफ़ कैसे परवाज़ कर सकते थे। वह ज़माने की रंगीनियों को अपनी निगाहों से देख रहे थे। वह जानते थे कि उनके बाद उनकी बेटी पर क्या-क्या सितम ढाए जाएंगे। दूसरी तरफ़ फ़ातिमा ज़हरा[स०] किस तरह बाप के बग़ैर इस ज़ुल्मभरी दुनिया में ज़िंदा रह सकेंगी। ज़हरा का दिल तो बाबा की रूह के साथ जुड़ा हुआ है। अगर पैग़म्बर[स०] वफ़ात पा गए तो फ़ातिमा[स०] कैसे ज़िंदा रह पाएंगी।

एक बार पैग़म्बर[स०] ने फ़ातिमा[स०] से फ़रमाया, "बेटी! हर साल जिब्रईल एक बार पूरा क़ुरआन मेरे सामने पढ़ते थे लेकिन इस साल दो बार पढ़ा है।"

फ़ातिमा[स०] ने परेशान होकर पूछा, "बाबा! इसका मतलब क्या है?"

"बेटी! शायद ये मेरी ज़िंदगी का आख़िरी साल है।"

धीरे-धीरे मौत का असर पैग़म्बर के जिस्म से ज़ाहिर होने लगा। बुख़ार की तेज़ी ने नबी को घेरे में ले रखा था। यहाँ तक कि चलने की ताक़त भी बदन में नहीं रही थी। हर रोज़ मुहाजिरों और अंसार के गिरोह नबी के आख़िरी दीदार के लिए हसरत और उम्मीद के साथ आया करते थे। मुहाजिरों और अंसार की परेशान निगाहें रसूल[स०] के दरवाज़े पर लगी रहतीं थीं। जब भी दरवाज़ा खुलने की आवाज़ आती थी तो सबके दिल धड़कना भूल जाते थे। सांसें रुक जातीं थीं कि शायद पैग़म्बर की सांस भी रुक गई हो। एक रोज़ मुहाजिरों और अंसार के बहुत से बुज़ुर्ग रसूल[स०] के पास इकटठा थे और रसूल के पुरसुकून चेहरे को देख रहे थे कि अचानक सबने देखा कि रसूल[स०] की पेशानी पर शिकनें पड़ने लगीं हैं। ऐसा लगा जैसे रसूलुल्लाह किसी बहुत ख़ास चीज़ के बारे में कुछ सोच रहे हैं. ... जैसे कोई अहम ख़बर देना चाहते हैं। ऐसी ख़बर जिसने इस बीमारी की हालत में भी रसूल[स०] को परेशान कर रखा हो। पैग़म्बर[स०] ने बहुत मुश्किल से अपनी आँखों को खोला, उस उम्मत की फ़िक्र में जिसकी ख़ातिर रसूलुल्लाह ने सख़्त से सख़्त तकलीफ़ें बर्दाश्त की थीं, अपनी तकलीफ़ भूल गए। चेहरे पर आँसू बहने लगे। मुहाजिरों और अंसार के दिल भी उसी तरह तेज़ी से धड़क रहे थे। अब उन्हें यक़ीन हो चला था कि कुछ होने वाला है। आख़िर ऐसी कौन सी बात है जिसकी वजह से रसूल[स०] इन आख़िरी लम्हों में भी इतना परेशान हैं? पैग़म्बर ने अपने बदन में मौजूद पूरी

ताक़त को जमा करके फ़रमाया, "मुझे काग़ज़ और क़लम ला दो ताकि तुम्हारे लिए ऐसी बात लिख दूँ जिस से मेरे बाद कभी गुमराह न हो।"

सब ने एक दूसरे की तरफ़ देखा और एक दूसरे की आँख में कुछ पढ़ना चाहा। जिनके दिलों में इश्के रसूल का शोला रौशन था, चिल्लाकर कहने लगे कि आख़िर देर क्यों करते हो? ख़ुदा का नबी हमारी हिदायत चाहता है। काग़ज़ और क़लम ले आओ ताकि कुछ लिख दें।

इनके उलट कुछ लोग जो बहुत दिनों से रसूल[स०] की वफ़ात का इन्तिज़ार कर रहे थे और उनके दिलों में रसूल[स०] की तरफ़ से कीना भरा हुआ था, कहने लगे कि पैग़म्बर बीमार हैं और ये बात भी बीमारी की वजह से हिज़यान में कह रहे हैं।

शायद वह लोग जानते थे कि रसूल[स०] उस वक़्त कुछ बातें लिखकर उनकी आरज़ुओं पर और उनकी लम्बी चाहतों पर पानी फेर देंगे लेकिन उन लोगों ने ये न सोचा कि नबी जिन्होंने तमाम उम्र एक भी ग़लत जुमला अपनी ज़बान से अदा नहीं किया, अब इस आलम में कैसे ग़लत कह सकते हैं? अल्लाह तआला ख़ुद उनके बारे में फ़रमा रहा है, "वह तो अपनी नफ़्सानी ख़्वाहिश से कुछ बोलते ही नहीं। ये तो बस वही है जो भेजी जाती है।"

पैग़म्बरे इस्लाम[स०] का रंग बदलने लगा और ग़मों ने घेर लिया। उम्मत के लिए मुश्किल से मुश्किल हालात को बर्दाश्त करने के बाद अब रसूल[स०] के लिए सबसे ज़्यादा तकलीफ़ देने वाला वक़्त आ गया है कि वह अपनी ही उम्मत को बर्बाद होता देखें। आख़िरी वक़्त में भी अपनी उम्मत की तरफ़ से फ़िक्रमंद हैं। पैग़म्बर बड़े अफ़सोस में थे और सर दर्द से फटा जा रहा था। इस तकलीफ के आलम में फ़रमाया, "यहाँ से चले जाओ। ये सही नहीं कि रसूल[स०] के सामने इस बेहयाई से झगड़ा करने लगो।" और फिर रसुलुल्लाह ख़ामोश हो गए। लोग सर झुकाकर कमरे से निकल गए। अब वहाँ सिर्फ़ फ़ातिमा ज़हरा[स०], हज़रत अली और उनके बच्चे रह गए थे जिनके चेहरों पर ग़म का असर दिख रहा था। रंजोग़म की फ़िज़ा कमरे में फैल गई थी। हसन व हुसैन[अ०] अपने नाना रसूले ख़ुदा[स०] के मुबारक क़दमों को चूमते हुए गिरया व ज़ारी में लगे थे। फ़ातिमा[स०] भी अपने बाबा के नज़दीक ही बैठी आँसू बहा रही थीं।

पैग़म्बर अपने आस-पास के माहौल से भी परेशान हैं। हसनैन[अ०] अपने नाना से पूछ रहे हैं, "नाना जान आप रो क्यों रहे हैं।"

फ़रमाया, "अपने ख़ानदान के लिए रो रहा हूँ। जो कुछ मेरी उम्मत की तरफ़ से उन पर गुज़रेगा उस पर रो रहा हूँ। मैं देख रहा हूँ कि मेरे बाद मेरी बेटी फ़ातिमा[स०] पर जुल्मो सितम ढाए जाएंगे। वह बाबा-बाबा कह कर फ़रियाद करेगी लेकिन कोई उसकी फ़रियाद नहीं सुनेगा।"

फ़ातिमा फूट-फूटकर रोती रहीं। पैग़म्बर के लरज़ते हाथ धीरे-धीरे ऊपर उठे और आपने कहा, "फ़ातिमा! रोओ नहीं"!

फ़ातिमा उसी तरह परेशानी के आलम में जवाब देती हैं, "मैं उन मुश्किलों के डर से नहीं रो रही हूँ जो आपके बाद मुझे उठानी हैं बल्कि आप से दूरी मेरे लिए सबसे सख़्त है।"

पैग़म्बर ने एक बार फिर बेटी के चेहरे को मुहब्बत से देखा और इशारे से अपने क़रीब बुलाया। फ़ातिमा[स०] अपना चेहरा हुज़ूर के चेहर-ए-पुर नूर के क़रीब ले गईं और फ़िर आपके चेहरे पर मुस्कुराहट आ गई। बाद में जब बीबी से इसकी वजह पूछी गई तो फ़रमाया कि बाबा ने मुझ से फ़रमाया था, "फ़ातिमा[स०] तुम सबसे पहले जन्नत में मुझ से मिलोगी।"

अली[अ०] ने पैग़म्बर का सर अपनी गोद में रख लिया और हसरत के साथ रसूल[स०] के चेहरे को देख रहे हैं। नबी-ए-अकरम[स०] ने एक बार फिर अपनी आँखों को खोला और कांपते हुए हाथ फ़ातिमा ज़हरा[स०] की तरफ़ बढ़ाए और बेटी के हाथों को अपने सीने से लगाया। दूसरे हाथ में अली का हाथ थामे हुए हैं। वह कुछ कहना चाहते हैं लेकिन आँसुओं की वजह से आवाज़ नहीं निकलती।

फ़ातिमा ज़हरा[स०] बाबा की हालत देखते हुए फ़रमाती हैं, "बाबा! आपके रोने से दिल फट रहा है। तन में आग लग रही है। ऐ ख़ुदा के नबी! आपके बाद आपकी औलाद पर क्या मुश्किलें नाज़िल होने वाली हैं? और दीन के रास्ते में अली[अ०] की मदद करने वाला कौन है?"

पैग़म्बर[स०] ने अली[अ०] से फ़रमाया, "ऐ अबुल हसन! ज़हरा ख़ुदा और रसूल की अमानत है। इस अमानत की अच्छी तरह हिफ़ाज़त करना। ऐ अली ख़ुदा की क़सम! फ़ातिमा जन्नत की औरतों की सरदार है.... ऐ अली! मैं इस से ख़ुश हूँ जिस से फ़ातिमा ख़ुश हैं और जिस से मैं ख़ुश हूँ उससे ख़ुदा और फ़रिश्ते भी ख़ुश हैं। मेरे भाई अली! अफ़सोस उन लोगों पर जो मेरी बेटी को तकलीफ़ पहुँचाएं! और अफ़सोस उन पर जो उसके हक़ को नाहक़ छीन लें। और अफ़सोस उन लोगों पर जो उसकी हुरमत का पास न रखें।"

कमरे का माहौल ग़म में डूब गया। रसूल[स०] का सर अली की गोद में था और हाथ फ़ातिमा[स०] की आग़ोश में। फ़रिश्तों के परों की आवाज़ महसूस की जा रही थी। लगता था जैसे सब मिलकर अल्लाह के रसूल[स०] की तारीफ़ में लगे हुए हैं। आपने एक बार फिर मुँह खोला और फ़रमाया, "ख़ुदा लानत करे उन लोगों पर जो इन पर सितम ढाएं"। फिर गहरी ख़ामोशी कमरे की फ़िज़ा पर छा गयी। तारीख़ इन कड़वे लम्हों को अपने दामन में लिखने के लिए तैयार थी। नबी[स०] की निगाहें कमरे के एक कोने की तरफ़ ठहर गईं और फिर होंट हिलने लगे। आप फ़रमा रहे थे, 'कोई नहीं है उस बुलंद साथी के अलावा' और पैग़म्बर दुनिया से रेहलत फ़रमा गए।

1-सूरए ज़ुमर/30

माँ बेटी

■ डाक्टर अफ़रोज़

जैसा कि हम जानते हैं कि औलाद की परवरिश में माँ का रोल बहुत ख़ास और बुनियादी होता है। यहाँ तक कि औलाद की पूरी ज़िंदगी बड़ी हद तक माँ के रोल पर टिकी होती है। माँ का वजूद घर को जोश और ज़िंदगी बख़्शता है और उसमें रहने वालों को कामयाबी की तरफ़ ले जाता है। इस आर्टिकिल में हम माँ और बेटियों के रिश्ते पर एक नज़र डालेंगें क्योंकि ये रिश्ता बड़ा नाज़ुक और सेंस्टिव रिश्ता है।

माँ और औलाद के रिश्ते को समझाने के लिए वह अलफ़ाज़ तलाश करना बहुत मुकिश्ल काम है जो इश्क़ो मुहब्बत और ईसार व फ़िदाकारी की उन बुलंदियों को अपने अंदर समो सकें जो इस रिश्ते में मौजूद हैं जबकि माँ और बेटी के ताल्लुक़ में इस से कुछ बढ़कर हमें वह अलफ़ाज़ तलाश करना होंगे जो मुहब्बत और ईसार के साथ-साथ राज़दारी और ख़ुलूस को भी बता सकें।

'माँ' ज़िंदगियों की कलियों की बाग़बान, सारी अच्छाईयों को मायने बख़्शने वाली हस्ती, मुहब्बत का सोर्स, सब्र व ईसार का नमूना और एहसान व सख़ावत का समंदर होती है। वह हमेशा चाहती है कि उसका वुजूद औलाद की ज़िंदगी को गरमाने वाला और रास्ता दिखाने वाला हो।

माँ चाहती है कि अपनी औलाद में सारी अच्छाईयाँ और कमाल पैदा कर सके। उसकी आग़ोश हमेशा औलाद को सुकून और आराम देती रहे।

हमेशा सुकून भरे ज़हन और ख़ुश-ख़ुश चेहरे के साथ औलाद की हमदम व हमदर्द रहे।

अपने बच्चों के लड़कपन और जवानी की स्टेज पर उनकी हमदर्द, साथ देने वाली और हमराज़ बनी रहे।

एक माँ अपनी औलाद से उसी वक़्त बेहतरीन और फ़ायदेमंद ताल्लुक़ बाक़ी रख सकती है और उसी वक़्त उसकी जज़्बाती और नफ़्सियाती ज़रूरतों को पूरा कर सकती है जब उसका अपने शौहर से रिश्ता अच्छा और मज़बूत हो।

वह उसी वक़्त औलाद से अपने रिश्ते को ज़िंदगी की हरारत से गरमा सकती है जब उसे शौहर से बेहतरीन ताल्लुक़ के नतीजे में रूहानी ख़ुशी और ज़हनी सुकून मिलता हो।

माँ उसी वक़्त औलाद की परवरिश में अपनी ज़िम्मेदारी और रोल को बेहतरीन तरीक़े से निभा सकती है जब उसका घर बदज़बानी व बदकलामी, तौहीन व हिक़ारत, धमकी व लड़ाई, झूठ और तोहमत व ग़ीबत जैसी बलाओं से बचा हुआ हो।

जिन माँओं का अपनी औलाद से बेहतरीन और गहरा ताल्लुक़ होता है वह ज़्यादातर ऐसी माएं होती हैं जिनके शौहर समझदार, मेहरबान और लॉजिकल सोच के मालिक होते हैं या फिर वह माएं हैं जिनके बच्चे बाप के मुहब्बत भरे साये से महरूम है और माँ को बाप और माँ दोनों का रोल अदा करना पड़ता है।

जब बच्चों को बड़ी मेहरबान लेकिन मज़बूत

और लॉजिकल सोच वाली माँ मिली हो जो ज़िंदगी के उतार चढ़ाव में उनका साथ दे और उनको रास्ता दिखा सके तो ऐसे बच्चे ज़हनी तौर पर पुर सुकून और कांफ़िडेंस से भरे होते हैं और बाप की मौत या घर से दूर होने से उनकी पर्सनाल्टी के बेहतरीन तरीक़े से फलने-फूलने पर कोई ग़लत असर नहीं डालती बल्कि इन हालात में क्योंकि माँ खुद पर बच्चों की परवरिश की दोहरी ज़िम्मेदारी महसूस करती है इसलिए कभी-कभी बच्चों की पर्सनाल्टी और भी ज़्यादा निखर जाती है।

दूसरे लफ़्ज़ों में औलाद की परवरिश में माँ का रोल बहुत ख़ास है और अगर वह खुद समझदार और अक़लमंद हो और औलाद की पर्सनाल्टी के संवरने के हर-हर मोड़ पर उसका वजूद औलाद के लिए प्यार-मुहब्बत और समझदारी की चाश्नी पेश करता रहे तो ऐसे बच्चे घर के माहौल में बाप के न होने की सूरत में भी हर तरह की महरूमी के एहसास से दूर और तमाम ज़हनी सुकून के साथ बेहतरीन अंदाज़ में परवान चढ़ सकते हैं। ये ख़याल रहे कि माँ का बेटी के साथ रिश्ता बड़ा नाज़ुक होता है। माएं बेटियों के वजूद में अपनी ज़िंदगी की खुशगवार और नाखुशगवार यादों और तर्जुबों को दोहराती हैं और उनकी सारी कोशिश ये होती है कि बेटियों की ज़िंदगी को हर तरह के नाखुशगवार तर्जुबों और समाजी नाकामियों से दूर रखें।

कुछ माएं जानबूझकर या अंजान बनते हुए अपनी पिछली ज़िंदगी की नाकामियों और महरूमियों को पूरा करने के तौर पर अपनी बेटियों की बदलती और फलती फूलती हुई पर्सनाल्टी में कुछ तरह के नज़रियों और आदतों को पैदा कर देती हैं और बार-बार अपनी इस कोशिश में वह बैलेंस की हद से आगे बढ़कर बच्चों से बेजा उम्मीदें लगा बैठती हैं या उनकी परवरिश इस अंदाज़ में करती हैं जो उनकी उम्र, ज़हनी सतह, नेचॅरल कामों, शरई ज़रूरतों और महौल से किसी तरह भी मैच नहीं करते।

माँ, बेटी के ताल्लुक़ की सबसे नुमायां खुसूसियत बेटियों का माँ की आदतों को अपनाना और आँख बंद करके उनकी तक़लीद करना है जो बेटों में बाप की नक़्क़ाली करने से कहीं ज़्यादा क्लियर होता है क्योंकि बेटियों को अपनी ज़िंदगी के अलग-अलग हिस्सों में ख़ासकर स्कूल में दाख़िल होने से पहले के ज़माने में माँ और दूसरी बुज़ुर्ग औरतों की सोहबत बेटों को बाप की सोहबत के मुक़ाबले में कहीं ज़्यादा मिलती है क्योंकि बाप ज़्यादातर घर से बाहर होते हैं। इसी वजह से बेटियाँ घर के माहौल में रहते हुए डायरेक्टली या इनडायरेक्टली मां को सबसे बेहतर अंदाज़ में देखती हैं। प्राइमरी स्कूलों में भी ऐसा होता है कि कम उम्र लड़कों को अपने बुज़ुर्गों के साथ वक़्त गुज़ारने का मौक़ा बहुत कम मिलता है। इस लेहाज़ से बेटियों का माँ से ताल्लुक़ आदतों और किरदार को अपनाने और उनके अक़ाएद की तक़लीद करने में बड़ा साफ़ और ध्यान देने वाला है।

इसीलिए जब बच्चियाँ माँ से अच्छे ताल्लुक़ के बेहतरीन तर्जुबों के साथ स्कूल के माहौल में क़दम रखती हैं तो आम तौर पर बड़ी आसानी से टीचर से घुल मिल जाती हैं और अपने आप उनकी सीखने की सलाहियत और टीचर की तरबियत पर ध्यान दूसरे हमउम्र बच्चों के मुक़ाबले में कहीं ज़्यादा होता है जो माँ से ताल्लुक़ के ख़ूबसूरत और अच्छे असर से महरूम रहे हों।

जो माँएं बेटियों से अच्छे ताल्लुक़ की क़ायल हैं, वह हमेशा शौक़ दिलाने और ताज़ीम करने का रवैया अपनाती हैं और उस पर हमेशा चलती हैं। ऐसी माँएं दोस्त बनाने का बेहतरीन तरीक़ा चुनती हैं और इसीलिए उनकी बेटियाँ लड़कपन, जवानी और बचपन से बालिग़ होने तक हर उम्र में जब भी किसी हमराज़ और हमदर्द की बहुत सख़्त ज़रूरत महसूस करती है तो वह माँ को ही अपने बेहतरीन दोस्त के तौर पर चुनती हैं।

वह माँएं जो अपनी बेटियों से मुहब्बत का ख़ूबसूरत रिश्ता बाक़ी रखने और खुलूस, मेहरबानी, सच्चाई और कांफ़िडेंस जैसी लॉजिकल आदतों से उनमें मुहब्बत के एहसास को उजागर करने और कांफ़िडेंस को परवान चढ़ाने में कामयाब रहती हैं, वह अपनी बेटियों की सब से क़रीबी दोस्त बन जाती हैं। इस दो तरफ़ा ताल्लुक़ के नतीजे में बेटियाँ बेहतरीन ज़हनी सलाहियत व सुकून और कांफ़िडेंस की मालिक बन जाती हैं और ग़लत आदतों और अख़लाक़ी-समाजी बुराईयों से महफ़ूज़ रहती हैं और इस तरह उनकी इल्मी, आर्टिस्टिक और क्रिएटिव सलाहियतें भी खुलकर सामने आ जाती हैं।

माँ बेटी के लिए बेहतरीन नमूना है। जब एक मेहरबान और समझदार माँ अपने अक़्ली लेकिन दिलकश रवैय्ये से बेटी के साथ एक मुहब्बत भरा रिश्ता जोड़ती है तो वह बतौर माँ अपनी सबसे ख़ास ज़िम्मेदारी निभाने के साथ-साथ बच्चे के संवरने के शुरुआती दौर ही में उसके साथ दोस्ती के रिश्ते की बुनियाद डाल देती है और इस तरह उस ज़माने ही से बेटी की नेचरल ज़रूरत को बेहतरीन तरीक़े से पूरा कर पाती है। हक़ीक़त में परवरिश के इस ज़बरदस्त सिस्टम के ज़रिए माँ बेटी को इंडायरेक्टली शौहर की ख़िदमत और औलाद की परवरिश जैसे अहम काम भी सिखाती रहती है। दूसरे लफ़्ज़ों में औलाद और ख़ासकर बेटी के लिए बेहतर रोल माडल यानी माँ जब उसकी सबसे क़रीबी और हमराज़ दोस्त भी बन जाती है तो बेटी माँ से घरदारी और बच्चों की परवरिश के गुर भी सीखने लगती है और

घर का आंगन, ज़िंदगी गुज़ारने का ढंग सिखाने वाली क्लास बन जाता है।

दर्दमंद और साबिर माएं जो प्यार-मुहब्बत के साथ समझदारी से काम लेती हैं, इस बात को मानती हैं कि अक़ीदे और मज़हबी रवैय्ये जैसे नमाज़ व इबादत, पाकदामनी, हिजाब, सच्चाई, सब्र, ख़ुशअख़लाक़ी, मेहरबानी वग़ैरा रूह को सुकून पहुँचाते हैं और क्रिएटिव सलाहियतों को परवान चढ़ाने और पर्सनाल्टी को फलने फूलने का बहतरीन मौक़ा देते हैं। यही वजह है कि वह अपनी औलाद में मज़हबी एहसासात जगाने और ज़ेहनी सलाहियतों के परवान चढ़ाने की भरपूर कोशिश करती हैं ताकि उन्हें रूहानी सुकून, अक़्ल व फ़िक्र की ताज़गी और दुनिया व आख़िरत में कामयाबी मयस्सर हो सके।

अच्छी सोच और अच्छे ख़यालात रखने वाली माओं का अपनी बेटियों से रिश्ता पूरी मुहब्बत और ख़ुलूस के बावजूद इतना एहतेराम वाला होता है कि उसमें एक दूसरे पर मुहब्बत की नज़र के अलावा और कोई नज़र नहीं डाली जाती और अच्छे लहजे के अलावा दूसरा लहजा नहीं अपनाया जाता।

ये रिश्ता ज़ुल्म व ज़्यादती, झगड़ालूपन, बेइज़्ज़ती, ग़ीबत व तोहमत और हसद वग़ैरा से बिल्कुल पाक होता है और जो कुछ है वह ख़ुलूस, मुहब्बत और सच्चाई है।

समझदार माँएं इस बात को अच्छी तरह जानती हैं कि सब लोग चाहे वह छोटे हों या बड़े, लड़के हों या लड़कियाँ, सब चाहते हैं कि अपने रोल माडल और महबूब बुज़ुर्गों को हमेशा सख़्त लेकिन मुहब्बत करने वाला पाएं और बेटियाँ चाहती हैं कि उनकी माँ हमेशा ख़ुश-ख़ुश, मुहब्बत करने वाली, कांफ़िडेंस से भरपूर और एक्टिव हो। बेटियाँ बिल्कुल नहीं चाहतीं कि उनका महबूब रोल माडल कांफ़िडेंस से ख़ाली, शको शुब्हे का शिकार और बेचैनी व परेशानी में फंसा हो।

माँएं ख़ूब समझती हैं और बाप भी इस हक़ीक़त पर यक़ीन रखते हैं कि बेटियों को ऐसी माँ से ताल्लुक़ बनाए रखना सख़्त मुश्किल होता है जो कांफ़िडेंस से महरूम, हालात से परेशान, उदास व ग़मगीन और दूसरों के सामने झुकी हुई हो। कभी-कभी ऐसी माँ की तक़लीद के मरहले पर वह ज़ेहनी उलझनों का शिकार हो जाती हैं और हमेशा इस चीज़ से डरी रहती हैं कि बड़े होकर उन्हें भी इस तरह की ज़िंदगी और हालात से न गुज़रना पड़े। कभी-कभी लड़कियों की तरफ़ से मर्दाना तौर-तरीक़ों का इज़हार या मर्द होने की ख़्वाहिश इसी कड़वी हक़ीक़त का आइना है क्योंकि वह नहीं चाहतीं कि आम ज़िंदगी में उन्हें ऐसी ज़िंदगी गुज़ारनी पड़े। इसलिए वह लड़की जो एक रौशन फ़्युचर की चाहत रखती हो और चाहती हो कि समाजी तौर पर कल एक एक्टिव और क्रिएटिव ज़िंदगी गुज़ार सके, उसे एक ऐसी माँ की सख़्त ज़रूरत है जो इस सिलसिले में उसके लिए नमूना हो और बाप से उसका ताल्लुक़ हमेशा दो तरफ़ा तौर पर असरदार और फ़ायदेमंद हो। वह ये बिल्कुल नहीं चाहती कि उसके माँ-बाप के बीच नौकर और मालिक जैसा रिश्ता हो। वह चाहती है कि उसकी माँ बा इख़्तियार और मेहरबान हो और एक्टिव व क्रिएटिव केरेक्टर वाली हो।

दूरअंदेश और समझदार माँएं ख़ूब समझती हैं कि घर के बच्चे उस वक़्त माँ-बाप के तौर तरीक़े अपनाने और उनकी हिदायात पर अमल करने को अपना फ़र्ज़ समझते हैं जब उनकी पर्सनाल्टी उनकी नज़र में महबूब हो।

यही वजह है कि कहने और करने में फ़र्क़ और

माँ-बाप के बीच झगड़े और नाराज़गियाँ यक़ीनन औलाद की नज़र में उनके एहतेराम को घटा देती हैं और नतीजे में उन से औलाद की ज़हनी हम आहंगी कमज़ोर पड़ जाती है और इसी वजह से औलाद की तरफ़ से उनके रवैय्यों और नसीहतों पर अमल करने में कमी आ जाती है। इसलिए माएं बेटियों से अपने क़रीबी ताल्लुक़ और दिल की बातें करने में न सिर्फ़ बाप की बुराईयाँ और गिले शिकवे बयान नहीं करतीं बल्कि हमेशा डायरेक्टली या इंडायरेक्टली उसकी तारीफ़ व हिमायत और ज़हमतों का इक़रार करती हैं, साथ ही औलाद को भी उसकी शुक्र गुज़ारी करना सिखाती हैं क्योंकि इस तरह बेटियाँ बाप की नसीहतों और हिदायतों को दिल के कानों से सुनकर उन पर अमल कर पाती हैं।

ज़ाहिर है कि एक समझदार बाप से भी यही उम्मीद है कि माँ के सामने और उसके पीठ-पीछे भी उसकी तारीफ़ और ताज़ीम करे, उसकी ज़हमतों को क़दर और शुक्र की नज़र से देखे ताकि औलाद भी माँ की क़दर करने वाली बने और उसमें शुक्र करने की आदत पैदा हो जो कि एक ठोस और शरीफ़ मिज़ाज पर्सनाल्टी की ज़रूरी क्वालिटी है।

समझदार माँएं और समझदार बाप ख़ूब जानते हैं कि घर एक बाग़ की तरह है जिसमें औलाद फूलों और फलों की तरह होती है तो माँ उसकी बाग़बान और बाप रखवाला।

बाप अपनी हिफ़ाज़त और निगेहबानी से बाग़बान यानी माँ को सेक्योरिटी और सुकून का एहसास दिलाता है तो माँ घर को अपने वुजूद की गर्मी से ख़ुशी और सुकून का गहवारा बनाती है, शौहर और औलाद ख़ासकर बेटियों से बेहतरीन ताल्लुक़ बरक़रार करती है और अपने लगातार मुहब्बत भरे बर्ताव से घर के लोगों को और मेहनत, कोशिश और क्रिएटिव रोल अदा करने पर उभारती है और हमेशा उनकी हिमायत और एहतेराम करती रहती है।

जो माएं बाप की ज़हमतों की क़दर करने और उसकी शख़सियत के पॉज़िटिव पहलुओं को सामने लाने के बजाए हमेशा औलाद के सामने उसकी कमियाँ गिनवाती रहती हैं, वह न सिर्फ़ बेटियों के सामने बाप की बुरी तस्वीर पेश करती हैं बल्कि उन्हें मर्दों से बदगुमान करके अजीब ज़ेहनी उलझन का शिकार बना देती हैं जिसकी वजह से उन्हें शौहर को चुनने में मुश्किलों से गुज़रना पड़ता है। दूसरे लफ़्ज़ों में फ़ैसला करते वक़्त शको शुब्हे और बदगुमानी और शादी के सही वक़्त पर फैसले में देरी, बचपन और लड़कपन में माँ की तरफ़ से पैदा किए हुए डर का नतीजा हो सकता है।

कभी-कभी कुछ माएं अपनी ज़ाती ख़ुसूसियात और ज़िंदगी के कड़वे तर्जुबों और महरूमियों की वजह से हमेशा औलाद के सामने ग़मगीन नज़र आती हैं। इस तरह वह बेटियों के दिल में अपने लिए रहम और हमदर्दी के जज़्बात पैदा करना चाहती हैं। इसलिए उनके साथ तनहाई के हर लम्हे को ग़नीमत जान कर अपनी सारी मुहब्बत निछावर करने के साथ अपने दुख भी बयान करती रहती हैं। इस तरह वह उनको अपने लिए एक हमदर्द बनाकर ग़मों की तस्कीन करती हैं और इस बात से सुकून पाती हैं कि उनकी बेटी का दिल उनके लिए दुखता है लेकिन ऐसे में वह इस बात से अंजान रह जाती हैं कि बेटी की बैलेंस्ड पर्सनाल्टी के लिए ज़ेहनी सुकून और ख़ुशी ज़रूरी है जबकि हर वक़्त माँ के दुखों का एहसास और ग़मगीन माहौल उसके चेहरे पर रंजो मलाल पैदा कर देता है। इसलिए समझदार माएं ज़िंदगी की सारी महरूमियों और दुखों के बावजूद बेटियों के लिए ख़ुशी और सुकून की अहमियत को समझते हुए हमेशा उनके सामने ख़ुश-ख़ुश नज़र आने की कोशिश करती हैं। ज़िंदगी के बारे में पॉज़िटिव रवैय्या अपनाती हैं और बेटियों को हमेशा कोशिश करने और पुर उम्मीद रहने का सबक़ देती हैं।

समझदार माएं अपनी बेटी के फलने-फूलने में उसकी ज़ाती, समाजी और ख़ानदानी ज़िंदगी में उसकी कामयाबी को सामने रखती हैं और उनकी सारी कोशिश होती है कि उनकी बेटी पूरे ज़हनी सुकून के साथ ख़ुशी से ज़िंदगी गुज़ारे और उसकी फ़िक्र को ज़िंदगी मिले।

समझदार और ज़िम्मेदार माएं ख़ूब समझती हैं कि शादी के मसले में वह अपनी बेटियों की बेहतरीन एडवाइज़र हैं, इसलिए वह हर तरह की तंगनज़री और फ़ाल्तू एतेराज़ों को किनारे रख देती हैं और दूसरों की लालच, जलन और बेकार के जज़्बात से बचते हुए बेटी के हमराज़ के तौर पर उसे फ़्युचर का पहले से अंदाज़ा कराते हुए पूरी समझदारी के साथ मश्वरा देती है और किसी फ़ैसले पर पहुँचने में उसकी मदद और राहनुमाई करती हैं कि शादी के मामले में जो चीज़ें ज़्यादा अहम हैं, वह अच्छा शौहर, अच्छी बीवी और अच्छे माँ-बाप बनने की सलाहियत, अच्छा अख़लाक़, वेल्युज़ की हिफ़ाज़त, मज़हब को अहमियत देना और एक दूसरे को सुकून और ख़ुशी पहुँचाना है ताकि एक ऐसी ज़िंदगी की शुरुआत की जा सके जिसमें दुनियावी और उख़रवी कामयाबी की गारंटी हो और यूँ वह ख़ुदा से मदद हासिल करते हुए अपनी बेटियों को बेहतरीन अंदाज़ में हिदायत और हिमायत करती हैं।

क़ज़ा नमाज़

मैंने जब अपनी आँखें खोलकर आस-पास नज़र डाली तो हैरान रह गई क्योंकि दिन निकल आया था। लिहाफ़ अपने ऊपर से उतार कर मैं भागती हुई खिड़की के पास गई। सूरज निकल चुका था। मैं कमरे से किचन की तरफ़ गई। अम्मी चाय बनाने में लगी थीं। मैंने अम्मी से कहा, "आप ने मुझे नमाज़ के लिए क्यों नहीं उठाया?" अम्मी ने शायद मेरी बात नहीं सुनी और अपने काम में लगी रहीं। मैं आंगन में आ गई। देखा कि पापा एक्र्सासाइज़ कर रहे हैं। मैंने सलाम करने के बाद उन से कहा, "पापा! आज मुझे नमाज़ के लिए क्यों नहीं उठाया?" पापा ने एक्र्सासाइज़ के बीच नज़र उठाकर मुझे देखा और दोबारा एक्र्सासाइज़ करने लगे। पापा के जवाब से मायूस होकर मैं दोबारा कमरे में आ गई। देखा कि अम्मी नाश्ता लगा रही थीं। मैंने अम्मी को सलाम किया जो मैं पहले जल्दी में करना भूल गई थी। फिर दोबारा अपना सवाल दोहराया। अम्मी ने कनखियों से मुझे देखते हुए सलाम का जवाब दिया लेकिन मेरी बात का जवाब मुझे नहीं मिला। मैं समझ गई कि अम्मी नाराज़ हैं। मैंने सोचा कि नाराज़ तो मुझे होना चाहिए कि उन्होंने मुझे नमाज़ के लिए जगाया नहीं। मैंने डाइनिंग टेबिल के पास रखी हुई कुर्सी पर हाथ रख कर एक बार फिर अपनी बात दोहराई और ज़रा तेज़ अवाज़ में पूछा, "सूरज निकल आया लेकिन आप लोगों ने मुझे नमाज़ के लिए क्यों नहीं उठाया?"

अम्मी अब भी ख़ामोश थीं, लग रहा था जैसे मुझसे कोई बात छिपाई जा रही है। वह चाय की ट्रे हाथ में लिए किचन से कमरे में दाख़िल हुईं। पापा की एक्र्सासाइज़ भी ख़त्म हो चुकी थी। वह भी अंदर ही आ गए और नाश्ता शुरु हो गया लेकिन मैं उसी तरह बैठी रही।

"अब बताइए! मैं क्या करूँ? क्या मैं सूरज को दोबारा पलटा सकती हूँ कि फ़ज्र का वक़्त हो जाए और नमाज़ अदा कर लूँ?" थोड़ी देर बाद मैं फिर बोली क्योंकि मुझे अपनी नमाज़ क़ज़ा हो जाने का बहुत अफ़सोस था।

"हम ने तुम्हें आवाज़ दी थी, कई बार उठाया लेकिन तुम उठी ही नहीं।" अम्मी ने बहुत आराम से जवाब दिया।

"आप ने आवाज़ दी थी?" मैंने मुँह बनाकर पूछा।

अम्मी ने कोई जवाब न दिया।

"लेकिन मैंने आपकी आवाज़ सुनी क्यों नहीं?" आपने ज़रूर दिल ही दिल में आवाज़ दी होगी!" मुझे यक़ीन नहीं आ रहा था।

अम्मी निवाला मुँह में रखते-रखते ज़रा रुकीं और कहने लगीं "देखो भई! हमारे घर में कोई माइक तो लगा हुआ नहीं है जिसे ऑन करके लोगों को जगाया जाए। अगर रात जल्दी सो जाओ तो सुबह नमाज़ के लिए ख़ुद ही आँख खुल जाती है।"

वाक़ई अम्मी सही कह रही थीं। कल रात सीरियल देखते-देखते सोने के लिए बहुत देर हो गई थी। हालांकि अम्मी और पापा दोनों कहते रहे थे कि जल्दी सो जाओ लेकिन मैं अनसुनी करती रही कि आज कल मेरी छुट्टियाँ हैं अगर मैं थोड़ी देर जाग लूँ तो कोई हरज नहीं है।

पापा ने मेरा हाथ पकड़कर प्यार से सहलाया और बोले, "यक़ीनन तुम अपने दिल में रात को देर तक जागने और नमाज़ क़ज़ा होने पर शरमिंदा हो लेकिन फिर भी ये तुम्हारे लिए एक सबक़ है जिसे तुम याद रखो। रही बात इस नमाज़ की जो तुम ने नहीं पढ़ी तो ऐसा करना कि तुम अपनी नमाज़ की क़ज़ा पढ़ लेना।"

मैंने ये बात पहली बार सुनी थी। हैरत से पूछा, "क़ज़ा! क्या मतलब?"

पापा ने कहा, "पहले तुम नाश्ता कर लो फिर बताऊँगा कि क़ज़ा क्या होती है।"

मैं जल्दी-जल्दी मुँह हाथ धोकर आई और नाश्ता करने लगी। इसी दौरान पापा ने बताया कि अगर नमाज़ का वक़्त गुज़र जाए और नमाज़ न पढ़ सकें तो उस नमाज़ को वक़्त के गुज़रने के बाद पढ़ा जा सकता है। बेटा! इसी को क़ज़ा नमाज़ कहते हैं।

"लेकिन पापा ये कैसे मुमकिन है? सूरज निकल चुका है, दिन चढ़ गया है?" मैं अब भी हैरान थी।

"हाँ बेटी! दिन तो निकल आया है लेकिन ख़ुदा चाहता है कि हम हर हाल में उसके सामने हाज़िर रहें। उस से बात करें। इसलिए उसने हमें क़ज़ा नमाज़ की इजाज़त दी है। हाँ! ये ज़रूर है कि क़ज़ा नमाज़ पढ़ते वक़्त हमें ख़ुदा से वादा करना चाहिए कि आगे से नमाज़ वक़्त पर पढ़ेंगे और देर नहीं करेंगे।"

मैं सोचने लगी वाक़ई ख़ुदा कितना मेहरबान है। वह हमें कितना पसंद करता है। हमें कितने मौक़े देता है। नमाज़ का वक़्त निकल जाने की वजह से मेरे ज़हन पर जो बोझ था वह क़ज़ा नमाज़ के बारे में सुनकर अब काफ़ी हद तक दूर हो चुका था।

नूरानी इंक़ेलाब

■ असद रज़ा

करबला का वाक़िआ हर उस इंसान पर असर डालता है जो इसके ज़रिए हक़ को तलाश करना चाहता है। करबला ने तारीख़ के धारे को मोड़ दिया और ऐसा मोड़ा कि आज तक ये हक़ के तलाश करने वालों को रास्ता दिखाती रहती है। करबला ने लोगों को गहरी नींद से उठा दिया है। पानी एक बेहोश आदमी को तो उठा सकता है मगर जिहालत की गहरी नींद में सोई हुई क़ौम को जगाने के लिए ख़ून की ज़रूरत होती है। इमाम हुसैन[अ॰] के ख़ून ने सोई हुई उम्मत को जगाया और ऐसा ज़लज़ला पैदा किया जिसने बनी उमैय्या की हुकूमत की बुनियादों तक को हिला दिया और जिससे उसके बाद आने वाले ज़माने में उनकी हुकूमत पूरी तरह ख़त्म हो गई।

इमाम हुसैन फ़रमाते हैं, "रसूले ख़ुदा[स॰] ने फ़रमाया कि जो कोई भी देखे कि एक हाकिम उन चीज़ों को हलाह कर रहा है जिनको अल्लाह ने हराम किया है, अल्लाह के वादे की मुख़ालिफ़त कर रहा है, रसूले ख़ुदा[स॰] की सुन्नत की मुख़ालिफ़त कर रहा है, अल्लाह के बंदों के साथ ज़ुल्म और ज़्यादती से पेश आ रहा है और वह अपनी ज़बान और अमल से उसकी मुख़ालेफ़त नहीं करता है तो अल्लाह को हक़ है कि वह उसका भी वही अंजाम करे जो उस ज़ालिम का होगा। बेशक ये लोग शैतान की पैरवी पर लग गए हैं और अल्लाह के दीन पर अमल को छोड़ चुके हैं। इन लोगों ने फ़साद और बेईमानी को आम किया है, इस्लामी क़ानूनों को ख़त्म किया है, बैतुलमाल को लूटा है और ख़ुदा ने जिसको हराम किया है उसको इन्होंने हलाल कर दिया है और जिसको अल्लाह ने हलाल किया है उसको इन्होंने हराम कर दिया है। मुझे दूसरों के मुक़ाबले में ज़्यादा हक़ है कि रसूले ख़ुदा[स॰] की नसीहत के मुताबिक़ क़दम उठाऊँ।"

"ऐसी ज़िंदगी इंसान के लायक़ नही है जो ज़ुल्म के साए में हो , सिवाए इसके कि वेल्युज़ को फिर से फैलाने के लिए आगे आएं। क्या तुम नहीं देखते कि हक़ और सही बात पर अमल नहीं हो रहा है, बातिल और ग़लत बातों से नहीं रोका जा रहा है? ऐसी हालत में एक मोमिन इंसान अपने ख़ुदा से मुलाक़ात करने की तमन्ना करता है। बेशक मौत मेरे लिए ख़ुशी है और ज़ालिमों के साथ ज़िंदगी एक ज़िल्लत है।"

इमाम ख़ुमैनी[रह॰] जिन्होंने फ़रमाया था कि हमारा ये इंक़ेलाब, करबला का फल है, उन्होंने मोहर्रम के बारे में सलाह दी है, "मज़लूमों के आक़ा और आज़ादों के मौला की मजलिस को पूरी अज़मत, शानो शौकत और रौनक़ से बरपा किया जाए। ख़ून से रंगे हुए आशूरा के झण्डों को उठाया जाए उस दिन की याद में कि जिस दिन मज़लूम, ज़ालिम से बदला लेता है। हमारे नौजवानों को हरगिज़ ये नहीं सोचना चाहिए कि ये सिर्फ़ रोने का मामला है या ये कि हम एक सिर्फ गिरया करने वाली क़ौम हैं। ये वह सोच है जो दूसरे चाहते हैं। यक़ीन कीजिए और इसको दोहराते रहिए क्योंकि वह इन आँसुओं से डरते हैं क्योंकि ये आँसू मज़लूमों के लिए हैं और ज़ालिमों के ख़िलाफ़ एक आवाज़ हैं, ये जुलूस ज़ुल्म के ख़िलाफ़ हैं, ये मातमी जुलूस हमारी जीत की निशानी हैं, हर जगह मजालिसें बरपा कीजिए, ज़ाकिरीन मसाएब पढ़ें और लोग गिरया करें। ज़ाकिरों को चाहिए कि मसाएब को कुछ जुमलों में ख़त्म न कर दें। अहलेबैत[अ॰] के मसाएब को तफ़सील से पढ़ें, जैसा कि पहले होता था। अहलेबैत[अ॰] की फ़ज़ीलत और फ़ज़ाएल और उन पर होने वाले ज़ुल्मों को इतने ख़ुलूस और जज़्बे से बयान किया जाए कि लोग मैदाने अमल के लिए तैयार हो जाएं। उनको ये बात ज़रूर मालूम होनी चाहिए कि हमारे मासूम इमामों[अ॰] ने अपनी ज़िंदगियों को इस्लाम की तबलीग़ के लिए वक़्फ़ कर दिया था।"

सवाल ये पैदा होता है कि इतनी क़ौमें जो बहुत पाबंदी के साथ ग़म मनाती हैं, फिर भी जेहालत और ग़फ़लत में क्यों डूबी रहती हैं? क्यों ये आँसू, गिरया करने वालों के दिलों में पड़े हुए गुनाहों के दाग़ को नहीं हटा पाते?

मातम के बेअसर होने की एक वजह गिरया करने वाले कुछ लोगों में इस हद तक ख़ुलूस और पाकीज़गी की कमी है कि इमाम हुसैन[अ॰] की याद में बहाए जाने वाले आँसू भी उनके ग़ाफ़िल नफ़्स को जगा नहीं पाते हैं। दूसरी वजह वह जेहालत का पर्दा है जो रस्मों पर ज़ोर देने की शक्ल में पड़ा है कि जिन्होंने करबला को असली पैग़ाम और मक़सद से अलग कर दिया है, ये रस्में आगे आ गई हैं और असल पैग़ामे करबला पीछे रह गया है।

अपना असर दिखाने के लिए करबला की रूह और तालीम को भी इस्लाम की सारी टीचिंग्स की तरह एक पुरख़ुलूस और हक़ का तलाश करने वाला दिल चाहिए। करबला हमारी ज़िंदगियों में इंक़ेलाब बरपा कर सकती है मगर उस वक़्त जब हम इसको बाक़ी सारी इस्लामी टीचिंग्स के देखें और समझें।

इमाम हसन अ० की सुलह भी करबला से कुछ कम नहीं

इमाम हसन[अ०] की सुलह ने दरअसल इमाम हुसैन[अ०] की आने वाली क़ुरबानी की बुनियाद डाली थी। इसीलिए जब इमाम हुसैन[अ०] की शहादत का इमाम हसन[अ०] की शहादत के दस साल बाद वक़्त आ गया तो इमाम हुसैन ने बड़ी आनबान से इस इम्तिहान में कामयाबी हासिल कर ली थी। इस्लाम के भेस में इस्लाम को ख़त्म करने का जो भूत बनाया गया था उसका चेहरा सामने आ गया था और दुनिया वालों ने देख लिया था कि मुहम्मद[स०] और आले मुहम्मद[अ०] क्या चाहते हैं और सलतनतों का बहाव किस तरफ़ है।

अगर हिस्टरी पर नज़र डाली जाए तो इमाम हसन[अ०] की सुलह पर किसी तरह से भी एतेराज़ नहीं किया जा सकता। एक बड़े आलिमे दीन से उनके शार्गिदों ने पूछा कि इमाम हसन[अ०] और इमाम हुसैन[अ०] की ज़िंदगियाँ बिल्कुल एक-दूसरे की उलटी थीं, एक ने सुलह की और दूसरे ने जंग। वह आलिम एक मोटी सी चादर लेकर दरिया पर गए और उसको दरिया के पानी में ख़ूब अच्छी तरह से डुबोया। जब पानी के वज़न से चादर बहुत भारी हो गई तो एक शार्गिद को एक सिरा पकड़वाया और ख़ुद दूसरा सिरा पकड़ा और कहा कि इसको निचोड़ो। अब शार्गिद हाथ से दाएं तरफ़ घुमाकर चादर को निचोड़ रहा था और उस आलिम का हाथ उसके उलटी तरफ़ चल रहा था ताकि पानी निचुड़ता रहे। जब चादर का पानी निकल गया तो आलिम ने शार्गिदों से पूछा कि क्या बात तुम लोगों की समझ में आई? देखो! चादर को सुखाने के लिए दोनों आदमियों का हाथ एक दूसरे की उलटी तरफ़ चलता है मगर मक़सद दोनों का एक ही है कि कपड़े से पानी निकाल दिया जाए। इसी तरह से दोनों इमामों का भी एक ही मक़सद था कि नाना के दीने इस्लाम को किसी भी तरह बस बचा लिया जाए। एक ने सुलह का तरीक़ा इस्तेमाल किया और दूसरे ने करबला में जंग करके और क़ुर्बानियाँ देकर इस्लाम को बचाया। साथ ही इमाम हुसैन[अ०] भी अपने भाई इमाम हसन[अ०] की 50 हिजरी में शहादत के बाद दस साल तक सब्र का मुज़ाहेरा करते रहे।

हालात और वक़्त के एतेबार से कहीं पर सुलह कर ली जाती है और कहीं पर जंग। ख़ामोशी भी जंग का एक जवाब ही होती है।

ज़माना ये सबक़ हज़रत फ़ातिमा[स०] के दिल के टुकड़ों से ले सकता है कि कहाँ पर सुलह होती है कहाँ पर जंग।

इमाम हसन[अ०] एक ऐसे हादी और रहनुमा थे जिन्होंने बचपन ही से दीन की तबलीग़ और रहनुमाई का काम शुरु कर दिया था। आपने ऐसे बड़े-बड़े काम अंजाम दिए कि रसूले अकरम[स०] को गोद में लेकर कहना पड़ा कि ये दोनों मेरे बेटे, इमाम हैं चाहे खड़े रहें या बैठ जाएं। ये दोनों जन्नत के जवानों के सरदार हैं और इन के बाबा इन से भी अफ़ज़ल है। अब अगर उम्मत के बूढ़े भी जन्नत में जाने के ख़्वाहिशमन्द होंगे तो उन्हें भी इन शहज़ादों को जन्नत का सरदार मानना पड़ेगा। जन्नत इनके क़ब्ज़े में है और कौसर इनके बाबा के क़ब्ज़े में। इनकी माँ ख़ातूने जन्नत है।

रसूलुल्लाह[स०] ने इमाम हसन[अ०] के हमेशा फ़ज़ाएल बयान किए हैं। नवासा मस्जिद में आ जाए तो मिंबर से उतर कर गोदी में बिठा लिया करते थे। सजदे में आ जाए तो सर नहीं उठाते थे। ईद का दिन था तो कांधे पर बिठाकर ऊँट बन गए। मुबाहले का दिन आया तो उंगली पकड़कर ले चले। ततहीर की मंज़िल आई तो गले से लगाकर रिसालत की कमज़ोरी को ताक़त में बदल दिया। ईद का दिन आया तो बेटी ज़हरा[स०] की दहलीज़ पर बैठकर इमाम हसन[अ०] के बोसे लिए और हिरनी का बच्चा आया तो उसे शहज़ादे के हवाले कर दिया। हज़रत अली[अ०] के ज़माने में भी अगर कोई मसला पूछने आता था तो आप भी इमाम हसन[अ०] से ही जवाब दिलवाते थे।

करबला के बाद कूफ़ा व शाम के बदले हुए हालात

इस्लामी हिस्ट्री पर नज़र रखने वाला हर शख़्स जानता है कि हुसैनी इंक़ेलाब को पूरा करने की ज़िम्मेदारी हज़रत सैय्यदे सज्जाद[अ] और हज़रत ज़ैनब[स] ने पूरी की है। अगर इन क़ैदियों ने अपनी ज़िम्मेदारी को अच्छी तरह से पूरा न किया होता तो शोहदाए करबला की मेहनतें इतनी जल्दी सामने न आ पातीं। वाक़िअ-ए-करबला के बाद सैय्यदे सज्जाद[अ] ने क़रीब 34-35 साल तक दीने इस्लाम और हुसैनी मिशन की जिस तरह हिफ़ाज़त की है वह किसी भी इंक़ेलाब की कामयाबी की बुनियाद कही जा सकती है। इमाम ज़ैनुलआबिदीन[अ] और उनकी फूफी हज़रत ज़ैनब[स] ने अपनी इंक़ेलाबी स्ट्रेटजी और सब्र के साथ सच को लोगों तक पहुँचाया और अपने इन्क़ेलाबी थाट्स के ज़रिए सोए ज़हनों को होशियार किया और ज़ुल्म के हुजूम में इस्लामी टीचिंग्स को आँसू और दुआ के अंदाज़ में पेश करके बनी उमैय्या के चेहरों पर पड़ी नक़ाब उलट दी और कूफ़ा व शाम जैसी बंजर ज़मीनों में शहादत और क़ुर्बानी के बीज छिड़कर कर इस्लाम और क़ुरआन के हरे-भरे पेड़ खड़े कर दिए। क़ैद के आलम में कूफ़ा व शाम में और क़ैद से छूट कर मदीना और मक्का में हुसैनी शहादत के एक-एक वाक़िए को नक़्श कर दिया और यज़ीदी ज़ुल्म की सारी दास्तानें दुनिया को बता दीं। इमाम हुसैन[अ] की शहादत और अहलेहरम की क़ैद की हिमायत में हुकूमत से निकलने वाले तमाम दावों और फ़तवों के मुँहतोड़ जवाब देकर मज़लूमियत के हमले करके ज़ुल्म के परखच्चे उड़ा दिए और यज़ीदी मुजरिमों को अपनी कामयाबी पर ग़ुरूर और ख़ुशी के माहौल में, ज़िल्लत और शर्मिंदगी का एहसास करते हुए अपने जुर्म अपने मातहतों के सर मंढने पर मजबूर होना पड़ा। अहले हरम को क़ैद करके जिस वक़्त कूफ़ा ले गए, शहर में दाख़ले से पहले एक रात क़ैदियों को शहर से बाहर रोक दिया गया। इब्ने साद ख़ेमे में बैठकर अपने साथियों के साथ शराब पी रहा था और अहले हरम आसमान के नीचे भूके-प्यासे बच्चों के साथ ये तकलीफ़ भरी रात ख़त्म होने का इंतेज़ार कर रहे थे। सुबह हुई तो नेज़ों पर आगे-आगे शहीदों के सर और पीछे-पीछे रस्सियों में बंधे हुए रसूल की बेटियों के साथ सैय्यदे सज्जाद[अ], ख़ुशियों के तबल बजाता लश्कर क़ैदियों के साथ शहरे कूफ़ा में दाख़िल हुआ तो जनाबे ज़ैनब[स], उम्मे कुलसूम[स] और सैय्यदे सज्जाद[अ] के ख़ुतबों ने कूफ़ियों के दिलों में हलचल मचा दी। वह आलम हुआ कि तमाशे के लिए जमा किए गए दुश्मन दग़ाबाज़ों में भी गिरया व ज़ारी से कोहराम मच गया। ऐसे में अली[अ] की बेटी ज़ैनब[स] ने अवाज़ दी, "ऐ कूफ़े वालो! ऐ मक्कारो! तुम रो रहे हो? ख़ुदा करे तुम्हारे ये आँसू कभी न थमें! तुम यूँही रोते रहो! तुम्हारी मिसाल उस बूढ़ी औरत की सी है जो मज़बूत धागा बट कर खोल दे और फिर फ़रियाद करे। तुम कूड़े में उगे हुए घास-फूस की तरह हो।" सैय्यदे सज्जाद[अ] ने फ़रमाया, "कूफ़े वालो! तुम हमारे मसाएब पर रोते हो! आख़िर हम पर ये ज़ुल्म किस ने किए हैं? हमारे अज़ीज़ों को किसने क़त्ल किया है? हमको क़ैद करके यहाँ कौन लाया है?" बच्चों को भूक से तड़पता देख कर कुछ औरतों ने सदक़े के खजूर बच्चों की तरफ़ फेंके तो उम्मे कुलसूम[स] ने टोका, "ख़बरदार! सदक़ा हम आले मुहम्मद[स] पर हराम है।" ये सुनकर मजमे से रोने की आवाज़ बुलन्द हो गई और इब्ने साद ने हुक्म दिया कि क़ैदियों को मजमे से दूर कर दिया जाए। जब अहले हरम को दरबार में ले गए तो इमाम सज्जाद[अ] पर नज़र पड़ते ही इब्ने ज़ियाद ने सवाल किया कि क़ैदियों में ये जवान कौन है? इसको ज़िंदा क्यों छोड़ दिया? जवाब मिला कि ये हुसैन[अ] के बेटे अली[अ] हैं, बीमारी की वजह से छोड़ दिये गए हैं। इब्ने ज़ियाद ने कहा कि क्या हुसैन[अ] के बेटे अली[अ] को ख़ुदा ने करबला में क़त्ल नहीं किया? अब सैय्यदे सज्जाद[अ] ख़ामोश कैसे रह सकते थे। ज़ंजीर संभाल कर खड़े हो गए और फ़रमाया, "हाँ! मेरा एक और भाई अली था जिसको तुम्हारे फ़ौजियों ने शहीद कर दिया।" इब्ने ज़ियाद ये जवाब सुनकर तिलमिला उठा और कहा, "नहीं! उसे ख़ुदा ने क़त्ल किया है।" इमाम[अ] ने फ़रमाया, "ख़ुदा ने सूरए ज़ुमर में फ़रमाया है कि अल्लाह मौत के वक़्त मरने वाले की रूह क़ब्ज़ कर लेता है, इस लिहाज़ से शहीदों की मौत भी ख़ुदा के तकवीनी इरादे के तहत है लेकिन तशरीई इरादे के तहत नहीं है, क़ातिलों की पीठ क़त्ल के जुर्म से ख़ाली नहीं हो सकती।" अब इब्ने ज़ियाद के पास कोई जवाब नहीं था। उसने चिल्ला कर कहा, "ये मुझ से ज़बान लड़ा रहा है। ले जाओ इसकी गर्दन उड़ा दो"। अब जनाबे ज़ैनब[स] उठीं और जनाब सैय्यदे सज्जाद की ढाल बन गईं, अगर इसकी गर्दन काटनी है तो पहले मुझे क़त्ल कर दो।" इमाम[अ] ने फूफी के ईसार को देखते हुए फ़रमाया कि फूफी ठहरिये! मैं इसको जवाब देता हूँ और आगे बढ़कर कहा, "तुम मुझे क़त्ल की धमकी देते हो? क्या तुम्हें नहीं मालूम कि राहे हक़ में क़त्ल होना हमारी आदत और शहीद होना हमारी इज़्ज़त व सरबुलंदी है।" इस तरह अहलेहरम ने कूफ़े में कुछ ही दिनों में कूफ़ियों के दिलों में आग के वह शोले रौशन कर दिए कि कुछ ही दिनों बाद अबूउबैदा सक़फ़ी और जनाबे मुख़्तार की लीडरशिप में वह इंक़ेलाब बरपा हुए कि हुसैन[अ] के क़ातिलों का नाम ही मिटकर रह गया।

बच्चों की परवरिश में आवाज़ों का असर

■ ज़ैनब बतूल

इंसानी ज़िंदगी का सबसे सेंसिटव और नाज़ुक ज़माना उसके बचपन का ज़माना है। इंसान की पर्सनाल्टी की बुनियाद इसी ज़माने में पड़ती है और उसकी एक ख़ास शक्ल बन जाती है। बच्चा जब इस दुनिया में आता है तो उसके ज़हन का कैसेट बिल्कुल साफ़ होता है इसीलिए जो चीज़ वह देखता या सुनता है वह फ़ौरन रिकार्ड हो जाती है।

बच्चे का ज़हन बहुत ही नाज़ुक, हस्सास और सेंसिटिव होता है। जो आवाज़ उसके कान में जाती है या जो भी मंज़र वह देखता है, उस से बच्चे के ज़हन पर ख़ास असर पड़ते हैं। बच्चे के कान उसके ज़हन, दिल और रूह के लिए एक खिड़की की तरह हैं। इसीलिए जो आवाज़ें भी इस रास्ते से दाख़िल होंगी उसकी पर्सनाल्टी में उनका बहुत ज़्यादा अमल दख़ल होगा। इसलिए माँ-बाप का पहला फ़र्ज़ यही है कि वह देखें कि उन्होंने अपने बच्चे के जिस्म और उसकी रूह की परवरिश के लिए कैसा माहौल दिया है और उसे सुनने और देखने के लिए क्या चीज़ दी है।

तीन ख़ास बातें

1-पूरा आराम व सुकून नए पैदा होने वाले बच्चे की पहली ज़रूरत

बच्चा एक आरामदेह और पुरसुकून माहौल से इस दुनिया में आता है। इसलिए जब वह दुनिया में आ जाए तो तब भी उसे पुरसुकून माहौल ही मिलना चाहिए ताकि वह शुरुआती दिनों में आराम से सो सके।

ज़्यादा प्यार करने, बार-बार गोद में लेने और दूसरों को दिखाते रहने से बच्चे का सुकून मिट जाता है जो उसके लिए नुक़सान पहुँचाने वाला है।

2-शोर-हंगामा

ज़्यादा ऊँची आवाज़ें, चीख़-पुकार और कानों को फाड़ देने वाला म्युज़िक बच्चे के नाज़ुक जिस्म पर बहुत बुरा असर डालता है और उसके ज़हन पर निगेटिव असर पड़ते हैं। इस बारे में इंग्लैण्ड के एक स्कालर और बच्चों की नफ़्सियात के माहिर जिन्होंने नौ महीने से लेकर एक साल के एक हज़ार बच्चों पर रिसर्च की है, कहते हैं, "टी.वी., टेप रिकार्डर और रेडियो वग़ैरा की भद्दी आवाज़ें, बच्चे के ज़हन में ख़लल डालती हैं...इसकी वजह से बच्चा देर से बोलना सीखता है और अपना मतलब समझाने में भी उसे मुश्किलों का सामना करना पड़ता है...जिन बच्चों ने अपनी ज़िंदगी का पहला साल पुरसुकून माहौल में न गुज़ारा हो, वह स्कूल में भी अपनी उम्र के बच्चों से पीछे रह जाते हैं और दिमाग़ में भी वह उन से कमज़ोर होते हैं जो माँ-बाप अपने बच्चों को ख़ामोश करवाने के लिए टी.वी. वग़ैरा ऑन कर देते हैं, वह अंजाने में अपने बच्चे की ज़हनी सेहत पर बुरा असर डाल रहे होते हैं और उनके सीखने की सलाहियत पर गहरी चोट पहुँचाते हैं। म्युज़िक या दूसरी चीज़ें सुनने के लिए हेडफ़ोन इस्तेमाल करवाने और ख़ास तौर पर आराम के टाइम में उसे इस्तेमाल करने से बच्चे के ज़हनी डेवलप्मेंट पर बहुत बुरा असर पड़ता है।"

3-नए पैदा होने वाले बच्चे के ज़हन और उसकी रूह को प्यार भरी आवाज़ों और अच्छी बातों की ख़ूराक देना

यूँ तो नया पैदा होने वाला बच्चा अलफ़ाज़ के मायने नहीं समझता लेकिन यही अलफ़ाज़ और आवाज़ें उसकी हस्सास और सेंसिटिव रूह पर बहुत ख़ास असर डालती हैं। बच्चा धीरे-धीरे इन जुमलों को पहचानने लगता है और हो सकता है यही पहचान उसकी आने वाली ज़िंदगी के लिए

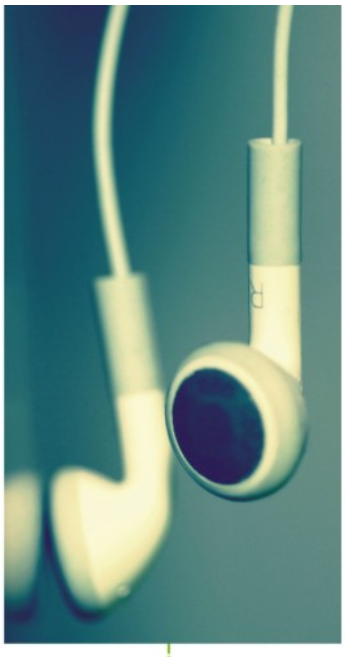

असरदार साबित हो। जैसे जो बच्चा दीनी माहौल में परवरिश पाता है वह सैकड़ों बार अज़ान की आवाज़ सुन लेता है, अल्लाह का प्यारा लफ़्ज़ उसके कानों से बार-बार टकराता है और वह अपनी आँखों से माँ-बाप को बार-बार नमाज़ पढ़ते देखता है जबकि दूसरी तरफ़ एक नया पैदा होने वाला बच्चा जिसने बुरे या बेदीन माहौल में परवरिश पाई है, उसने गाने सुने और बुरे मंज़र देखे हैं। याद रखिए! ये दोनों बच्चे एक जैसे नहीं हो सकते।

समझदार और ज़िम्मेदार माँ-बाप अपने बच्चों की परवरिश के लिए कोई मौक़ा बर्बाद नहीं करते यहाँ तक कि अच्छी बातें उनके कानों तक पहुँचाते हैं और अच्छे मंज़र उन्हें दिखाने से भी नहीं चूकते।

रसूले अकरम ने भी परवरिश के इस सेंसिटिव नुकते को नज़रअंदाज़ नहीं किया और फ़रमाया है, ''जैसे ही बच्चा दुनिया में आए तो उसके दाएं कान में अज़ान और बाएं कान में इक़ामत कहो।''

रसूले इस्लाम जानते थे कि नया पैदा होने वाला बच्चा अज़ान और इक़ामत में बोले जाने वाले अलफ़ाज़ के मायने नहीं समझता लेकिन ये जुमले बच्चे की रूह और ज़हन पर असर डालते हैं और उसे इनसे मानूस कर देते हैं और इन पाकीज़ा अलफ़ाज़ से बच्चे की ये मुहब्बत बेअसर नहीं रहती है।

बच्चे पर होने वाले असर का ताल्लुक़ सुनने से नहीं है बल्कि कहा जा सकता है कि जो चीज़ बच्चे के सेंस, ज़हन और आसाब पर असर डालती है, उनमें से कोई भी उसकी आने वाली ज़िंदगी से अलग नहीं होती।

एक बुज़ुर्ग आलिमे दीन कहते हैं, ''एक दिन मेरे पास एक ग़ैरमुस्लिम आया और उसने मुझ से कहा कि मैं इस्लाम क़ुबूल करना चाहता हूँ। मैंने उसे कलमा पढ़ाया और उसके मुसलमान हो जाने के बाद उस से पूछा कि तुम ने इस्लाम क्यों क़ुबूल किया है?

उसने जवाब दिया, ''मुझे बचपन ही से इस्लाम से मुहब्बत थी और इस्लाम के लिए मुझे अपने अंदर एक कशिश सी महसूस होती थी। जब भी मैं मुसलामनों के महल्ले से गुज़रता और अज़ान की आवाज़ मेरे कानों से टकराती थी तो मुझे बहुत अच्छा लगता था और मुझे ऐसा महसूस होता था जैसे कोई ताक़त मुझे रोक रही है। मैं चलते-चलते रुक जाता था और अज़ान सुनता रहता था। ये चीज़ मुझे बहुत अच्छी लगती थी। इसी मुहब्बत की वजह से मैं मजबूर हो गया कि मैं इस्लाम के बारे में रिसर्च करूँ। जिसका नतीजा ये हुआ कि मैंने इस्लाम की हक़्क़ानियत को जान लिया और आज मुसलमान हो गया।''

मैंने उस से कहा, ''क्या तुम अपनी माँ को मेरे पास ला सकते हो। मैं उनसे कुछ पूछना चाहता हूँ।'' वह गया और अपनी माँ को ले आया जो उस वक़्त भी ग़ैर मुस्लिम थीं।

मैंने उस औरत से पूछा, ''आपने अपने बेटे साथ ऐसा क्या किया था कि ये इस्लाम से इतना मुतास्सिर हो गया?''

''कोई ख़ास नहीं! बल्कि मुझे ये भी मालूम नहीं कि ये इस्लमा से इतना मुतास्सिर क्यों है जबकि मैं और इसके पापा भी मुसलमान नहीं हैं।'' उसकी माँ ने ताज्जुब से कहा।

मैंने कहा, ''आप अपने ज़हन पर ज़ोर डालें कि जब आप प्रेग्नेंट थीं या इसे फ़ीड करवाती थीं तो उस ज़माने में कोई ऐसा काम किया हो जो इसकी इस्लाम से मुहब्बत की वजह बना हो?''

माँ सर झुकाकर सोचने लगी। बच्चे की ज़िंदगी के हर हिस्से को उसने अपने ज़हन में दोहराया। फिर अचानक सर उठाकर कहने लगी, ''एक बात याद पड़ती है कि तीस साल पहले जब मैं प्रेग्नेंट थी तो हम जिस महल्ले में रहते थे वहाँ हमारे पड़ोस में मुसलमानों के एक आलिमे दीन रहते थे। हम तो मुसलमान नहीं थे लेकिन हमारे आपस में बहुत अच्छे ताल्लुक़ात थे। जब ये पैदा हुआ तो वह आलिमे दीन अपने घर वालों के साथ इसे देखने के लिए आए और उन्होंने इस बच्चे को गोद में लेकर अपना मुँह इसके दाएं कान के नज़दीक करके उसमें कुछ कहा फिर बाएं कान में कुछ कहा जो मैं समझ नहीं सकी थी।''

मैंने कहा, ''बस-बस! मैं समझ गया। उस आलिमे दीन ने आपके बेटे के कान में अज़ान और इक़ामत कह कर इस्लाम से मुहब्बत का बीज उन्होंने इस बच्चे के दिल में बो दिया था जिसकी वजह से यह आज मुसलमान हा गया है।''

फ़ाईड चिकन क़ोरमा

Recipe

- चिकन.....एक पीस
- घी.....डेढ़ पाव
- प्याज़.....एक पाव
- पिसा गर्म मसाला.....दो तोला
- दही.....एक पाव
- नमक.....ज़ायक़े के हिसाब से
- सौंफ और काले ज़ीरे का अर्क़... .....थोड़ा सा
- पिसी अदरक.....दो तोला
- ज़ाफ़रान.....एक माशा
- धनिया.....ज़ायक़े के हिसाब से
- लाल मिर्च.....ज़ायक़े के हिसाब से

तरकीबः

चिकन के बराबर से पीस बना लीजिए। फिर उनको छुरी की नोक से गोद दीजिए। इसके बाद इन्हें ज़ीरे और सौंफ के अर्क़ से धोकर उन पर अदरक का लेप कर दीजिए। फिर इन टुकड़ों को सीख़ों पर चढ़ाकर कोयलों की आग पर भूनिए और उन पर घी टपकाती जाइए। जब वह अध-भुने हो जाएं तो हर टुकड़े के दो-दो टुकड़े कर लें। अब प्याज़ के लच्छे काट कर उन्हें घी में तल कर सुर्ख़ करके रख लीजिए। फिर ज़ाफ़रान को आधे घंटे दही मे मिलाकर दही को ख़ूब घोटिए और उसे भी अलग रखिएं इसके बाद बाक़ी प्याज़, आधा दही, नमक, लाल मिर्च और अदरक का मसाला पीस कर उसे घी में भून लीजिए और चिकन के भुने टुकड़े उस मसाले में डाल कर गला लीजिए। जब पानी ख़ुश्क हो जाए और टुकड़े और मसाला पानी छोड़ने लगें तो सालन चूल्हे से उतार लें और गर्म मसाला छिड़कर कर पराठों के साथ मज़े-मज़े ले लेकर खाइए। इस भुने हुए क़ोरमे का ज़ायक़ा लाजवाब होगा, खाने वाले उंगलियाँ चाटते रह जाएंगे।

क्या वाक़ई औरतों में अक़्ल कम होती है

■ दुरदाना हैदर

औरतों के बारे में यह बात हमारे समाज में बहुत ज़्यादा आम है कि उनमें अक़्ल कम होती है, उनसे किसी बात में मशवेरा नहीं करना चाहिए या जो बात वह कहें उसका उल्टा करना चहिए। इस बात को साबित करने के लिए फ़ौरन हज़रत अली[अ०] का यह क़ौल सुना दिया जाता है कि *'औरत नाक़िसुल अक़्ल और नाक़िसुल ईमान है।'*

इस तरह की हदीसें सिर्फ़ हज़रत अली[अ०] से ही नहीं बल्कि रसूले ख़ुदा[स०] से भी बताई जाती हैं। सवाल यह पैदा होता है कि इन रिवायतों का मतलब क्या है?

इस हदीस पर बात करने से पहले इन दो चीज़ों की तरफ़ इशारा करना ज़रूरी है।

1- औरत की पहचान।

2- हज़रत अली[अ०] की नज़र में औरत की हैसियत और स्टेटस।

1- औरत की पहचानः औरत की पहचान के लिए बेहतरीन प्रूफ़ क़ुरआन है जिसमें आज तक किसी भी तरह की कोई तबदीली नहीं हुई है। इसलिए अगर हम इस सिलसिले में क़ुरआन से राय लें तो सबसे पहले हमें औरत की खिलक़त के बारे में ध्यान देना होगा।

जो क़ुरआनी आयतें औरत और मर्द की खिलक़त को बयान करती हैं, उनसे यह बात सामने आती है कि औरत और मर्द दोनों को एक ही चीज़ से पैदा किया गया है। जैसे सूरए निसा की पहली आयत में इरशाद होता है, "ऐ लोगो! उस परवरदिगार से डरो जिसने तुम सबको एक ही नफ़्स से पैदा किया है।"

यानी क़ुरआन यह कहना चाहता है कि औरत और मर्द दोनों की हक़ीक़त रूह से जुड़ी हुई है, न कि बदन से। इंसान की इंसानियत न उसके जिस्म से और न ही जिस्म व रूह दोनों से मिलकर, बल्कि क़ुरआन सिर्फ़ रूह को इंसान की हक़ीक़त और बदन को सिर्फ़ रूह का एक औज़ार बताता है। इसीलिए क़ुरआन साफ़-साफ़ कहता है, "फिर जब मुकम्मल कर लूं और उसमें अपनी रूहे हयात फूंक दूं।" [1]

इसलिए रूहानी और जिस्मानी एतेबार से औरत को भी उसी चीज़ से पैदा किया गया है जिससे मर्द को, दोनों अपनी असलियत के लिहाज़ से एक जैसे हैं और उनमें कोई फ़र्क़ नहीं है।

2- क़ुरआनी आयतों से पता चलता है कि पूरी कायनात एक बेहतरीन सिस्टम पर चल रही है जिसमें किसी भी तरह की कोई कमी नहीं है जैसे यह आयत, "कितना बाबरकत है वह ख़ुदा जो बेहतरीन ख़लक़ करने वाला है।" [2]

तो फिर यह कैसे हो सकता है कि परवरदिगारे आलम अपनी अशरफ़ुल मख़्लूक़ात में से आधी आबादी यानी औरत को किसी क़िस्म के नक़्स या कमी के साथ ख़लक़ करे।

क़ुरआन की नज़र में मर्द और औरत के बीच फ़र्क़

जैसा कि हमने पहले भी बताया है कि क़ुरआन की नज़र में औरत और मर्द अपनी इंसानियत के लिहाज़ से बराबर हैं और इंसानियत की असलियत हक़ीक़त में उसकी रूह है जिसमें किसी तरह का कोई फ़र्क़ नहीं है लेकिन इसके बावजूद ज़हनी और जिस्मानी तौर पर मर्द-औरत दोनों में एक साफ़ फ़र्क़ दिखाई पड़ता है। सच यह है कि यही वह फ़र्क़ है जो इन दोनों को एक दूसरे से अलग करता है। इस बात पर ध्यान देना भी ज़रूरी है कि औरत और मर्द के बीच यही फ़र्क़ ख़ुदा की ख़िलक़त का बहुत ख़ूबसूरत और अजीबो-ग़रीब शाहकार है और इसी फ़र्क़ की वजह से दोनों में आपस में मुहब्बत पैदा होती है।

"तुम्हें क्या हो गया है कि तुम ख़ुदा की अज़मत का ख़्याल नहीं करते हो, जबकि उसी ने तुम्हें तरह-तरह का पैदा किया है।" [3]

हज़रत अली[अ०] इस बारे में फ़रमाते हैं, "लोगों के बीच पाए जाने वाले फ़र्क़ ही में उनकी अच्छाई है। अगर सब एक जैसे होते तो ख़त्म हो जाते।"

औरत और इंसानी कमाल

हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैं, "जो ख़ुद अपनी नज़र में ज़लील हो, उससे अच्छाई की कोई उम्मीद नहीं रखना चाहिए।"

पहली बात तो यह है कि हज़रत अली किसी इंसान को कम नहीं समझते थे और जब किसी एक इंसान को कम नहीं समझते थे तो पूरी इंसानियत की आधी आबादी यानी औरतों के बारे में आप इतनी बड़ी बात कैसे कह सकते हैं। दूसरी बात यह है कि अगर कोई अपने बारे में सोचता हो कि उसमें सूझबूझ नहीं है या सोचने-समझने की सलाहियत कम है तो फिर वह हर तरह की ग़ल्तियां भी करेगा और उसके साथ-साथ उसके अंदर से आगे बढ़ने और तरक़्क़ी करने का जज़्बा भी ख़त्म हो जाएगा। जबकि हज़रत अली[अ०] इंसानों को आगे बढ़ने और तरक़्क़ी करने के लिए हमेशा शौक़ दिलाते और उन्हें रास्ता दिखाते नज़र आते हैं और ख़ुद ख़ुदा मर्दों के साथ-साथ औरतों को

भी अच्छे कामों का हुक्म देता है, "और जो भी नेक काम करेगा चाहे वह मर्द हो या औरत, इस शर्त के साथ कि वह मोमिन भी हो, उन सबको जन्नत में दाख़िल किया जाएगा।" (4)

क़ुरआन की नज़र में असल कसोटी 'हक़ीक़ी कमाल' है जिसे तक़्वा और परहेज़गारी कहा जाता है। इसके अलावा दूसरे सारे इंसानी कमालों और वेल्युज़ को इसी एक कमाल को सामने रखकर परखा जाएगा।

इंसानी बुलंदी और कमाल खुदा की इबादत और इताअत से हासिल होते हैं। यह इबादत और इताअत मर्द-औरत, दोनों ही के लिए है। इसीलिए औरत भी कमाल और बुलंदी के रास्ते पर मर्द ही की तरह चल सकती है।

इस रास्ते में कामयाबी हासिल करने वाले मर्दों और औरतों के बारे में इस तरह फ़रमाता है, "उस दिन तुम बाईमान मर्द और बाईमान औरतों को देखोगे कि उनका नूरे ईमान उनके आगे-आगे और दाहिनी तरफ़ चल रहा है और उनसे कहा जा रहा है कि आज तुम्हारी बशारत का सामान वह बाग़ हैं जिनके नीचे नहरें जारी हैं और तुम हमेशा उन्हीं में रहने वाले हो और यही सबसे बड़ी कामयाबी है।" (5)

दिलचस्प बात यह है कि अल्लाह के रसूल[ﷺ] ने इस बारे में हमारे सामने नमूना पेश करेन के लिए एक औरत की पहचान भी कराई है, "मेरी बेटी फ़ातिमा[अ] सबक़त हासिल करने वाले क़ाफ़िले में है।"

इस अज़ीम बेटी ने ऐसी सबक़त हासिल की है कि इमाम हसन असकरी[अ] फ़रमाते हैं, "हम सारे इमाम तुम्हारे लिए खुदा की हुज्जत हैं और फ़ातिमा[अ] हमारे लिए हुज्जत हैं।"

क़ुरआन में सबसे ज़्यादा तारीफ़ हज़रत मरयम[अ] की हुई है जिन्हें 'इस्तेफ़ाकि' और 'त-ह-र-कि' जैसे नाम दिए गए हैं यानी तुम्हें चुन लिया गया और पाकीज़ा बना दिया गया है। जनाबे मरयम[अ] वह औरत हैं जिन्होंने खुदा के फ़रिश्तों के साथ बात की है।

इमाम हुसैन[अ] आख़िरी रुखसत के वक़्त एक औरत से ही तो यह कहते नज़र आते हैं, "ऐ बहन! मुझे अपनी नमाज़े शब में याद रखना।"

इमाम जाफ़र सादिक़[अ] अपनी बीवी के बारे में फ़रमाते हैं, "हमीदा हर बुराई और आलूदगी से पाक है।"

इमाम मोहम्मद बाक़िर[अ] उन्हीं के बारे में फ़रमाते हैं, "वह दुनिया और आख़िरत में तारीफ़ के लाएक़ हैं।"

यही नहीं बल्कि हिस्टरी ऐसी औरतों से भरी पड़ी है।

हज़रत अली[अ] की नज़र में औरतों की हैसियत और स्टेटस

एक ख़ास फ़ार्मूला जो हज़रत अली[अ] की नज़र में औरत की पर्सनालिटी को समझने और पहचानने के लिए बहुत अहम है, वह ख़ुद हज़रत अली[अ] की अपनी ज़िंदगी है यानी इमाम अली[अ] का अपनी बीवी, बेटियों और दूसरी औरतों के साथ बिहेवियर। इस बात को मद्देनज़र रखना चाहिए कि हर इमाम और मासूम का अमल किसी न किसी उसूल का पाबंद होता है और उनका वे ऑफ़ लाइफ़ हर तरह की बेराह रवी से दूर और एक ख़ास मेयार के मुताबिक़ होता है।

इसीलिए अगर हज़रत अली[अ] औरतों को बुराई की जड़ समझते या उनकी नज़र में उनकी अक़्ल कम होती तो यह बात उनके उस बिहेवियर और बर्ताव में भी झलकती जो वह औरतों के साथ बरतते थे और इसी उसूल के तहत अपने घर की औरतों के साथ भी उनका बर्ताव ऐसा ही होता लेकिन इसके उलट हम देखते हैं कि आप औरत को एक बुलंद मुक़ाम वाली पर्सनालिटी मानते है।

हज़रत अली[अ] का हज़रत फ़ातिमा[अ] के साथ बर्ताव

इमाम अली[अ] ने हमेशा अपने बर्ताव से इस बात को साबित किया है कि हज़रत फ़ातिमा[अ] से शादी करना आपके लिए बड़े फ़ख़्र की बात थी। नहजुल बलाग़ा के लैटर नम्बर 28 में आपने फ़रमाया है, "दुनिया की बेहतरीन औरत हमारे घर में है।"

बहुत सी रिवायतों से यह बात भी सामने आती है कि जब हज़रत ज़हरा[अ] को घरेलू कामों में कोई दिक़्क़त या मुश्किल पेश आती थी तो आप परेशान हो जाते थे और पूरी कोशिश करते थे कि घरेलू कामों में उनकी मदद करें।

इमाम सादिक़[अ] फ़रमाते हैं, "इमाम अली[अ] जंगल से लकड़ियां लाकर आग जलाते थे और हज़रत फ़ातिमा[अ] आटा गूंध कर रोटियां बनाती थीं।"

बहुत बार लोगों ने देखा था कि आप अपने घर का सामान लाते थे और कहते थे, "इंसान के घर के लिए जो काम फ़ाएदे मंद हो उसे करना साहिबाने कमाल के लिए कोई ऐब नहीं है।"

इसी तरह आपने हज़रत फ़ातिमा[अ] को कभी सियासी, इल्मी और समाजी कामों से भी नहीं रोका। हज़रत फ़ातिमा ज़हरा[अ] मदीने की औरतों को दीनी एहकाम सिखाती थी, जंगों में ज़ख़्मियों की देखभाल करतीं थीं। सबसे ख़ास मौक़ा वह है जब जब हज़रत अली[अ] को ज़बरदस्ती दरबार में ले जाया जा रहा था तो हज़रत फ़ातिमा[अ] इमामे वक़्त की मदद के लिए घर से बाहर आ गईं थीं। अपना हक़ यानी फ़िदक को वामस लेने के लिए दरबार में गईं और हज़ारों के मजमे में एक ऐसी तक़रीर की जो तारीख़ी किताबों में आज भी मौजूद है। इन सब

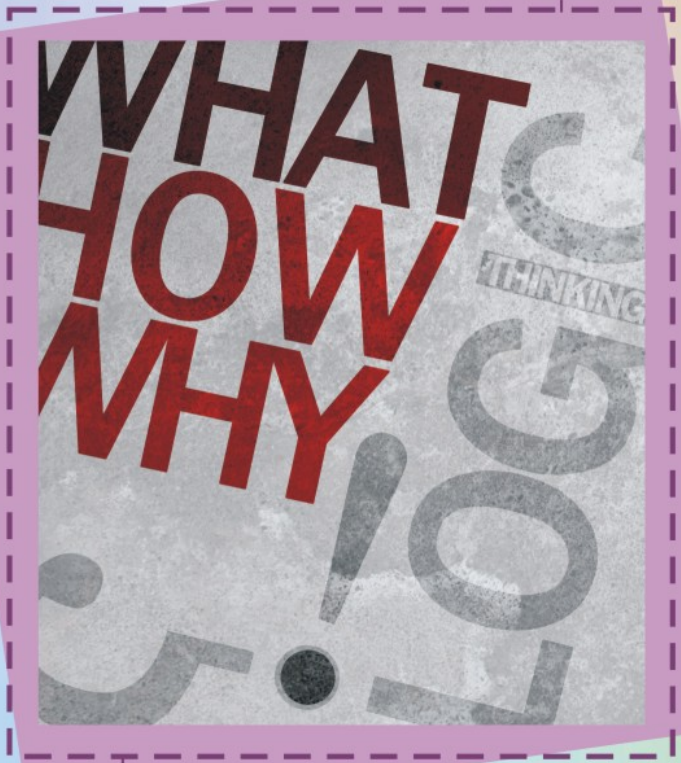

बातों से पता चलता है कि आप पर समाजी कामों में हिस्सा लेने पर कोई पाबंदी नहीं थी।

हज़रत अली[अ०] का हज़रत फ़ातिमा[अ०] का ऐहतेराम करना, उनके वुजूद को अपने लिए फ़ख़्र समझना, घरेलू ज़िंदगी में उनका हमदम और हमराज़ होना, उनको किसी तरह की सियासी और समाजी कामों से न रोकना, उनसे मुहब्बत करना और उसका इज़हार भी करना...क्या यह सब बातें एक मर्द की नज़र में औरत की अहमियत और उसके बुलंद मुक़ाम को ज़ाहिर नहीं करतीं?

असली बहस

अब सवाल यह पैदा होता है कि फिर हज़रत अली[अ०] की इस हदीस का क्या मतलब है?

अब तक की होने वाली बातों को सामने रखते हुए हम कह सकते हैं कि इस रिवायत से मुराद यह नहीं है कि औरत में क़ुदरती और पैदाईशी तौर पर ही अक़्ल कम होती है या उसमें सोचने-समझने की ताक़त कम होती है बल्कि इमाम का यह क़ौल कुछ बड़ी बारीक बातों की तरफ़ इशारा कर रहा है। अगर इन बातों पर ठीक से ध्यान दिया जाए तो इस रिवायत की हक़ीक़त साफ़ हो जाएगी।

रिवायतों में अक़्ल के अलग-अलग मायने बताए गए हैं। हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैं, "अक़्ल दो तरह की होती है: *अक़्ले तबई और अक़्ले तजुरबी*।"

इसलिए हो सकता है कि रिवायत में औरत की अक़्ल कम होने का मतलब औरत की अक़्ले तबई न हो बल्कि अक़्ल तजुरबी हो।

ख़ुदा ने इंसान को इसलिए पैदा किया है क्योंकि वह इंसान जो ख़ुदा की मख़लूक़ में सबसे अफ़ज़ल है, जिसे फ़रिश्तों ने सजदा किया है, उसकी तादाद दुनिया में ज़्यादा से ज़्यादा हो और यह तो हम सब जानते हैं कि किसी भी इंसान की पैदाईश में मां और बाप दोनों बराबर के हिस्सेदार होते हैं लेकिन किसी भी बच्चे की शख़्सियत, पर्सनालिटी, उसकी परवरिश और कैरेक्टर की बुलंदी में मां की अहमियत ज़्यादा होती है क्योंकि बच्चा अपनी ज़िंदगी के शुरू के नौ महीने जो बहुत ख़ास होते हैं, मां के पेट में बिताता है और जिस तरह के हालात व ख़्यालात से मां का सामना होता है, बच्चा भी उनका असर ले लेता है। पैदाईश के बाद भी बच्चे को अपनी ग़िज़ा मां से ही मिलती है। यह भी ख़ुदा का कमाल है कि उसने औरत की पैदाईश इसी तरह की है कि उसके अंदर बेहद सब्र व मेहरबानी होती है और अपनी इस ख़ुदादाद ख़ुसूसियत की वजह से इंसानियत की तरबियत की जो ज़िम्मेदारी उस पर डाली गई है उसे वह पूरा करती है। जबकि बाप बच्चे की दुनियावी ज़रूरतों को पूरा करता है। अपनी इस ज़िम्मेदारी को पूरा करने के लिए ज़रूरी है कि मर्द घर से बाहर निकले लेकिन औरत घरेलू माहौल में रहकर ही अपनी ज़िम्मेदारी को ज़्यादा अच्छे तरीक़े और आराम से पूरा कर सकती है। इसी वजह से समाज में उसकी एक्टिविटीज़ और काम-धाम और मर्द के मुक़ाबले में उसका समाजी तर्जुबा कम होता है लेकिन सिर्फ़ इस वजह से कोई यह नहीं कह सकता कि औरत में अक़्ल कम होती है क्योंकि तजुरबी अक़्ल के कम होने से यह नहीं कहा जा सकता कि औरत में अक़्ल ही कम है क्योंकि हम देखते हैं कि हालात के तहेत या ज़रूरत पड़ने पर औरत भी मर्दों की तरह समाज में निकल कर अपनी ज़िम्मेदारियों को निभा सकती है और अपनी इस कमी को पूरा करने की सलाहियत रखती है।

नतीजा

मर्द और औरत के बीच फ़र्क़ इन दोनों की अक़्ल और एहसासात व जज़बात का है लेकिन यह बात भी साफ़ करना ज़रूरी है कि अक़्ल से मुराद यहां तजुरबी अक़्ल है क्योंकि *अक़्ले अमली* (तबई) न सिर्फ़ यह कि औरतों में मर्दों से कम नहीं होती बल्कि कुछ वक़्तों और हालात में तो मर्दों से ज़्यादा भी होती है। (यहां हम जहां भी अक़्ल के बारे में बात करेंगे वहाँ मुराद तजुरबी अक़्ल है)

दूसरे लफ़्ज़ों में तजुरबी अक़्ल व फ़लसफ़ी अक़्ल, सियासी व समाजी अक़्ल, मर्दों में ज़्यादा पाई जाती है लेकिन *अक़्ले अमली* जिसका तअल्लुक़ इंसान की बुलंदी से है, वह औरत और मर्द दोनों में बराबर और एक जैसी होती है।

यूँ तो एक लिहाज़ से मर्द, औरतों से अलग होते हैं लेकिन इसका मतलब यह बिल्कुल नहीं है कि मर्द की क़ीमत औरत से ज़्यादा है, ख़ासकर ज़िंदगी की समझ, ख़ुदा की मारेफ़त को पाने और अख़लाक़ी बुलंदी में कि जिनका तअल्लुक़ *अक़्ले तबई* से है, मर्द और औरत बिल्कुल बराबर हैं। बल्कि कुछ हक़ीक़तें ऐसी भी हैं जिनको समझना औरतों के लिए ज़्यादा आसान होता है।

इसके अलावा एक और फ़र्क़ है जो मर्द और औरत के बीच पाया जाता है और वह है मुहब्बत और उलफ़त के जज़बात का फ़र्क़। फ़ितरी बात है कि औरत का मां और बीवी जैसी इतनी बड़ी ज़िम्मेदारी को पूरा करने के लिए इस सिफ़त से मालामाल होना ज़रूरी था। यह सिफ़त औरतों के लिए एक बहुत बड़ी ख़ूबी है।

एक्सपर्ट्स के ख़्याल में ज़िंदगी के आख़िरी लम्हे तक जो चीज़ इंसान को एक्टिव और फ़ुर्तीला रखती है वह उसके मुहब्बत भरे जज़बात हैं जिनकी कमी या ज़्यादती इंसान की अपनी और समाजी ज़िंदगी दोनों पर असर छोडती है। चूंकि यह जज़बात औरतों में मर्दों के मुक़ाबले में ज़्यादा शदीद होते हैं इसलिए सोचने-समझने वाले मामलात में जज़बात छाए रहते हैं। जबकि मर्दों में औरतों के मुक़ाबले में यह जज़बात कम होते हैं इसलिए अक़्ली मामलों में यह जज़बात उन पर हावी नहीं होते। इसीलिए मर्द जज़बाती लिहाज़ से और औरतें अक़्ली लिहाज़ से एक दूसरे के मोहताज रहते हैं। दूसरे लफ़्ज़ों में औरत की अक़्ली कमी मर्द के अक़्ली कमाल और मर्द की जज़बाती कमी औरत के जज़बाती कमाल के साथ मिलकर दोनों की ज़रूरतें पूरा करते हैं और क्योंकि इंसानी ज़िंदगी और उसके बुलंदी को जज़बात और अक़्ल दोनों ही की ज़रूरत है इसलिए इस तरह से एक औरत और एक मर्द मिलकर एक मुकम्मल इंसानी समाज की बुनियाद रखते हैं।

1-हिज्र/29, 2-मोमिनून/14, 3-नूह/13-14, 4-निसा/124, 5-सूरए हदीद/12

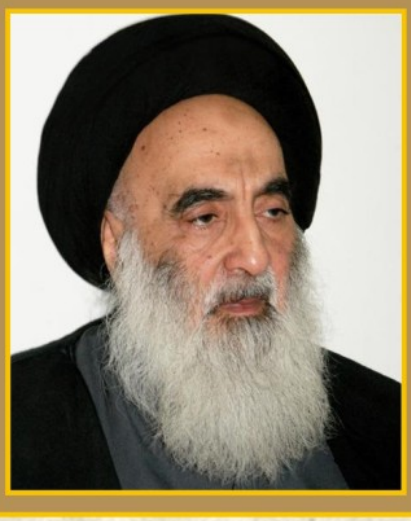

शरई एहकाम

पाक करने वाली चीज़ें

Part-2

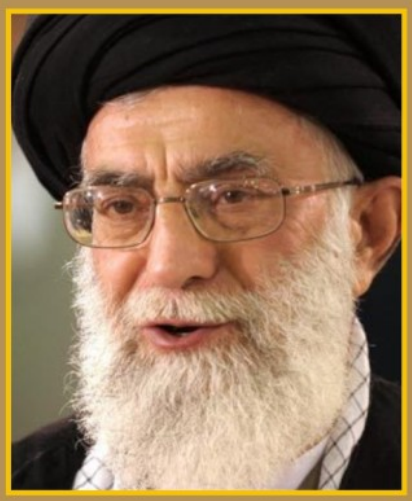

आगरा से मेरे और समीना के अपनी समर वेकेशन बिता कर वापस आने के बाद आज उससे मेरी मुलाक़ात हुई थी और वह भी इस तरह कि उसने फ़ोन करके मुझसे कहा था कि वह आज मेरे घर आ रही है। मैंने कहा कि नेक काम में देर काहे की, आ जाओ! आते ही वह तो शुरू हो गई कि तुमने आगरा से आते हुए ट्रेन में नजिस चीज़ों को पाक करने वाली चीज़ों में पहली चीज़ यानी पानी के बारे में बताया था। अब मुझे बाक़ी बची हुई दूसरी चीज़ों के बारे में भी बताओ।

मैंने कहा कि ठीक है, बाबा। सुनो! पानी के अलावा दूसरी पाक करने वाली चीज़, सूरज है।

दूसरी पाक करने वाली चीज़

सूरज, ज़मीन को पाक करता है और इसी तरह घरों और चार दीवारियों को भी। पेड़ और उसके पत्ते, घास और उनके अलावा जो भी ज़मीन में लगी हुई चीज़ें हैं वह भी इसी हुक्म में आती हैं।

"सूरज किस तरह ज़मीन और घरों को पाक करता है?" समीना ने पूछा।

मैंने कहा कि सूरज गीली ज़मीन और घरों पर इस तरह चमके कि उसकी किरनों से वह सूख जाएं और साथ ही साथ ज़मीन और मकान की निजासत भी ख़त्म हो जाए।

"अच्छा! अगर ज़मीन सूखी और नजिस हो और हम उसको सूरज से पाक करना चाहें तो किस तरह पाक करेंगे?" समीना ने अगला सवाल किया।

मैंने कहा कि इसको पाक करने का तरीक़ा ये है कि हम उस पर पानी डाल देंगे और उसके बाद सूरज की किरनें उसको सुखा कर पाक कर देंगी।

"अगर ज़मीन पेशाब से नजिस हो जाए और सूरज उस पर चमक कर उसको सुखा दे तो क्या ऐसी ज़मीन पाक हो जाएगी?"

"ज़मीन पाक तो हो जाएगी लेकिन शर्त यह है कि उस पर पेशाब का रंग बाक़ी न रहे।"

"कंकरी, ख़ाक, कीचड़ और पत्थर वग़ैरा जो ज़मीन ही के हिस्से हैं, अगर पेशाब से नजिस हो जाएं और सूरज उनको सुखा दे तो क्या ये भी पाक हो जाएंगे?"

"हां! बिल्कुल पाक हो जाएंगे।"

"अच्छा! वह बांस या लकड़ियां जो ज़मीन और घरों में गड़ी होती हैं, अगर वह नजिस हो जाएं तो उनका क्या हुक्म है?"

"नहीं! सूरज इनको पाक नहीं कर सकता।"

तीसरी पाक करने वाली चीज़

उसके बाद मैंने कहा कि चलो अब हम तीसरी पाक करने वाली चीज़ की तरफ़ बढ़ते हैं और वह है इंसान के जिस्म के अंदरूनी हिस्सों और हैवानों के जिस्म से अस्ल निजासत का ख़त्म हो जाना।

"ज़रा मिसाल देकर समझाओ!" समीना ने कहा।

"जैसे मुंह के अंदर से ख़ून का ख़त्म हो जाना या नाक और कान के अंदर से अस्ल निजासत का ख़त्म हो जाना। ख़ून के रुक जाने के बाद मुंह, नाक, कान और आंख वग़ैरा पाक हो जाते हैं, पानी से पाक करने की ज़रूरत नहीं है। इसी तरह किसी भी जानवर का जिस्म भी पाक हो सकता है। जैसे मुर्ग़ी की चोंच से लगा हुआ ख़ून या कोई निजासत अपने आप ख़त्म हो जाए तो उसकी चोंच पाक हो जाएगी। इसी तरह जैसे ही बिल्ली के मुंह से ख़ून साफ़ हो जाए, उसका मुंह पाक हो जाएगा।"

"और अगर किसी इंसान या जानवर को इंजेक्शन लगाया जाए और सूई जिस्म के अंदर चली जाए तो क्या वह नजिस हो जाएगी?" समीना ने नया सवाल किया।

"बिल्कुल नहीं! जिस सूई को जिस्म के अंदर से निकाला जाए और वह ख़ून से तर न हो तो नजिस नहीं होगी क्योंकि जिस्म के अंदर की निजासत से टकराने से किसी चीज़ पर निजासत का हुक्म नहीं लगाया जाता है।" मैंने कहा।

चौथी पाक करने वाली चीज़

पाक करने वाली चीज़ों में से एक ज़मीन है और हर वह चीज़ जिसे ज़मीन का हिस्सा कहा जा सके जैसे पत्थर, रेत, मिट्टी वग़ैरा। ईंट, सीमेंट का फ़र्श या तारकोल की सड़क वग़ैरा किसी नजिस चीज़ को पाक नहीं कर सकते। साथ ही ज़मीन के लिए भी यह शर्त है कि वह सूखी और पाक हो।

अभी मैं इतना कहकर चुप ही हुई थी कि समीना बोल पड़ी कि यह कैसे मालूम होगा कि ज़मीन पाक है।

"जब तक उसके नजिस होने का यक़ीन न हो जाए वह पाक है।"

"अच्छा! यह बताओ कि ज़मीन किन-किन चीज़ों को पाक कर सकती है?" समीना का अगला सवाल था।

"ज़मीन पर चलने से पांव के तलवे और जूते के तलवे पाक हो जाते हैं मगर इस शर्त के साथ कि चलने या रगड़ने से पांव या जूते के तलवे से निजासत ख़त्म हो जाए, दूसरे ये कि यह निजासत जूते या पांव के तलवे में नजिस ज़मीन से ही लगी हो। अगर ज़मीन के अलावा किसी और चीज़ से यह दोनों नजिस हुए हों तो फिर ऐसी हालत में ज़मीन उनको पाक नहीं करेगी।

पांचवीं पाक करने वाली चीज़

पांचवीं पाक करने वाली चीज़ 'तबईयत' है।

'तबईयत' किसे कहते हैं? उसने कहा।

मैंने कहा कि वह ग़ैर-मुस्लिम जो निजासत के हुक्म में है यानी नजिस है, अगर वह इस्लाम

ले आए तो वह पाक हो जाएगा और उसकी तबईअत में यानी उसके साथ-साथ उसका छोटा बच्चा जो अपने बाप की वजह से नजिस था, वह भी पाक हो जाएगा। इसी तरह ग़ैर-मुस्लिम दादा, दादी, मां अगर इस्लाम ले आएं तो उनके साथ-साथ उनका वह छोटा बच्चा भी पाक हो जाएगा जो उनकी निजासत की वजह से नजिस था। यह हुक्म उस वक़्त है जब यह छोटे बच्चे उन लोगों की किफ़ालत में हो जो इस्लाम ला रहे हैं यानी यह हुक्म हर उस शख़्स के लिए नहीं है कि जो उसका रिश्तेदार हो।

इसी तरह अगर शराब सिरका बन जाए तो उसके साथ-साथ वह बर्तन भी पाक हो जाएगा जिसमें शराब रखी हुई थी।

अगर मय्यत को तीन ग़ुस्ल दे दिए जाएं तो वह पाक हो जाएगी और उसकी तबईयत में ग़ुस्ल देने वाले का हाथ और वह तख़्ता जिस पर उसको ग़ुस्ल दिया गया है और वह कपड़े जिसमें उसको ग़ुस्ल दिया गया है, भी पाक हो जाएंगे।

और वह नजिस कपड़ा जिसको क़लील पानी से पाक किया गया है, उसकी तबईयत में धोने वाले का हाथ भी पाक हो जाएगा।

छठी पाक करने वाली चीज़

छटी पाक करने वाली चीज़, इस्लाम है।

इस्लाम किस तरह पाक करता है और किस को पाक करता है?

अगर कोई ग़ैर-मुस्लिम इस्लाम ले आए तो वह पाक हो जाता है।

सातवीं पाक करने वाली चीज़

बालिग़ मुसलमान या तमीज़दार बच्चे का ग़ायब होना।

समीना पूछने लगी कि इसका क्या मतलब है?

मैंने कहा कि अगर कोई मुसलमान कहीं चला जाए और तुम उसको न देख सको तो इस सूरत में अगर वह जाने से पहले नजिस था तो अब वापस आने पर वह पाक माना जाएगा और उसके साथ उसकी चीज़ें और उसका ज़रूरी सामान जैसे कपड़े, फ़र्श, बर्तन वग़ैरा जिनके पाक होने का शक हो, वह भी पाक हैं।

"ज़रा मिसाल देकर बताओ।" समीना बोली।

मैंने कहा, "जैसे तुम्हारे भाई का कोई कपड़ा नजिस था। वह जानता था या नहीं लेकिन तुम्हें पता था कि उसका कपड़ा नजिस है। कुछ देर बाद तुम्हारा भाई कहीं चला गया और फिर दोबारा वापस आ गया। अब तुम्हें उसके कपड़े के पाक होने का शक हो तो कहा जाएगा कि उसका कपड़ा पाक है।"

आठवीं पाक करने वाली चीज़

अगर इंसान का खून मच्छर, पिस्सू और जूं वग़ैरा के बदन में पहुंच जाए तो यह खून पाक हो जाता है क्योंकि यह ऐसे कीड़ों में से हैं जिनका खून आमतौर पर खून नहीं माना जाता। यह कीड़े अगर ख़ून को पी लें और फिर तुम उन्हें मार दो और उनका ख़ून तुम्हारे कपड़ों या जिस्म पर लग जाए तो यह ख़ून पाक है।

नवीं पाक करने वाली चीज़

नवीं पाक करने वाली चीज़, इस्तेहाला है।

"इस्तेहाला क्या होता है?" समीना झट से बोली।

"किसी चीज़ के किसी दूसरी चीज़ में बदल जाने को इस्तेहाला कहते हैं पर शर्त यह है कि वह पूरी तरह से किसी दूसरी चीज़ में बदल जाए और उसको कुछ और कहा जाने लगे।" मैंने कहा।

"ज़रा इसकी मिसाल तो दो!" उसने कहा।

"अगर कोई नजिस लकड़ी या गोबर जल कर राख हो जाए तो अब यह राख पाक है। इसी तरह अगर कुत्ता नमक की खान में गिर जाए और वक़्त गुज़रने के साथ गल-सड़ जाए तो पाक हो जाएगा। ऐसी ही और बहुत सी चीज़ें भी हैं जिन्हें तुम ख़ुद भी समझ सकती हो।

दसवीं पाक करने वाली चीज़

जो हैवान शरई तरीक़े से ज़िबह किया जाए और उसका खून निकल जाए तो अब जो खून उसके अंदर बाक़ी रह गया है वह पाक है।

ग्यारहवीं पाक करने वाली चीज़

शराब नजिस होती है लेकिन अगर सिरके में बदल जाए तो पाक हो जाती है।

बारहवीं पाक करने वाली चीज़

आख़िरी पाक करने वाली चीज़ इस्तेबरा है। अगर किसी हलाल गोश्त जानवर को इंसान के फ़ुज़ला खाने की आदत हो जाए तो उसका गोश्त खाना और दूध पीना हराम हो जाता है और साथ ही साथ उस जानवर का पेशाब, फ़ुज़ला, पसीना और जिस्म नजिस हो जाता है।

"तो फिर इस निजासत खाने वाले जानवर का इस्तेबरा कैसे किया जाएगा?" समीना ने पूछा।

"उसको निजासत खाने से इतने वक़्त तक रोका जाए कि फिर उसे निजासत खाने वाला जानवर न कहा जाए। इस्तेबरा के बाद उसका गोश्त, दूध और जो चीज़ें ऊपर बयान हुई हैं, सब पाक हो जाएंगी।" मैंने जवाब दिया।

"चलो! भई अब बस करो। अब मुझे कहीं जाना है। आगे फिर कभी बात करेंगे।"

अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर

इस्लामी एहकाम और फ़ुरूए दीन में से दो बहुत अहम, अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर हैं। क़ुरआने करीम और मासूमीन ने इन दोनों कलमों के बारे में काफ़ी ज़ोर दिया है। सिर्फ़ इस्लाम ही नहीं बल्कि दूसरे आसमानी मज़हबों ने भी अपने तरबियती अहकाम को जारी करने के लिए इनका सहारा लिया है। इसलिए अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर की तारीख़ बहुत पुरानी है। इमाम मुहम्मद बाक़िर[अ०] फ़रमाते हैं, "अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर नबियों और नेक किरदार लोगों का तरीका है।[1]

अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर के मायने

'अम्र' यानी हुक्म देना, 'नहीं' यानी रोकना और मना करना।

'मारूफ़' यानी पहचाना हुआ, नेक, अच्छा, 'मुन्कर' यानी नापसन्द, बुरा और बद।

दीनी ज़बान में मारूफ़ हर उस चीज़ को कहा जाता है जो परवरदिगार की इताअत और उसके तक़र्रुब और लोगों के साथ नेकी के तौर पर पहचाना जाए। हर वह काम जिसे ख़ुदा ने बुरा जाना है और हराम क़रार दिया है उसे मुन्कर कहते हैं।

'मारूफ़ और मुन्कर' सिर्फ़ छोटी-छोटी चीज़ों के लिए ही नहीं हैं बल्कि इनका दायरा बहुत फ़ैला हुआ है मारूफ़ हर अच्छे और पसंदीदा काम और मुन्कर हर बुरे और नापसंद काम को अपने अंदर शामिल कर लेता है।

दीन और अक़्ल की नज़र में बहुत से काम मारूफ़ और पसंदीदा हैं जैसे नमाज़ और दूसरे फ़ुरूए दीन, सच बोलना, वादे को पूरा करना, सब्र, फ़क़ीरों और नादारों की मदद, माफ़ करना, ख़ुदा के रास्ते में ख़र्च करना, सिल-ए-रहम, वालदैन का एहतेराम, सलाम करना, नेक अख़लाक़ और अच्छा बर्ताव, इल्म को अहमियत देना, पड़ोसियों और दोस्तों के राइट्स का ख़याल रखना, इस्लामी हिजाब का ख़याल रखना, तहारत व पाकीज़गी, हर काम में एतेदाल और दूसरे सैकड़ों नमूने।

इसके मुक़ाबले में बहुत से ऐसे काम हैं जिन्हें दीन और अक़्ल ने मुन्कर और नापसंद बताया है, जैसे नमाज़ छोड़ना, रोज़ा न रखना, जलन, कंजूसी, झूठ, ग़ुरूर, मुनाफ़ेक़त, दूसरों में ऐब निकालना और टोह में लगना, अफ़वाह फैलाना, चुग़लख़ोरी करना, हवस, बुरा-भला कहना, झगड़ा करना, नाअमनी फैलाना, अंधी तक़लीद करना, यतीम का माल खा जाना, ज़ुल्म और ज़ालिम की हिमायत करना, महंगा बेचना, सूदख़ोरी, रिश्वत लेना, दूसरों के हुक़ूक़ को पामाल करना वग़ैरा।

अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर की अहमियत

परवरदिगारे आलम फ़रमाता है, "मोमिन मर्द और मोमिन औरतें आपस में एक दूसरे के वली और मददगार हैं कि एक दूसरे को नेकियों का हुक्म देते हैं और बुराईयों से रोकते हैं।[2]

हज़रत अली[अ०] इन दो फ़रीज़ों का दूसरे इस्लामी अहकाम से मुक़ाबला करते हुए फ़रमाते हैं, "याद रखो! सारे नेक काम ख़ुदा के रास्ते में अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुनकर के मुक़ाबले में वही हैसियत रखते हैं जो गहरे समंदर में मुँह की राल की होती है।[3]

रसूले ख़ुदा[स०] एक ख़ूबसूरत मिसाल में समाज को एक कश्ती बताते हुए फ़रमाते हैं, "अगर कश्ती में सवार लोगों में से कोई ये कहे कि कश्ती में मेरा भी हक़ है, इसलिए मैं उसमें सूराख़ कर सकता हूँ और दूसरे मुसाफ़िर उसको इस काम से न रोकें तो उसका ये काम सारे मुसाफ़िरों को डुबो देगा क्योंकि कश्ती के डूबने से सब के सब डूब जाएंगे और हलाक हो जाएंगे और अगर दूसरे लोग उस शख़्स को इस काम से रोक दें तो वह ख़ुद भी निजात पा जाएगा और दूसरे मुसाफ़िर भी।"

इस्लाम सिर्फ़ इंसानों के बारे ही में अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर का हुक्म नहीं देता है बल्कि जानवरों के बारे में भी इसको अहमियत देता है। इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] फ़रमाते हैं, "बनी इस्राईल में एक बूढ़ा आबिद नमाज़ पढ़ रहा था कि उसकी नज़र दो बच्चों पर पड़ी जो एक मुर्ग़े के पर को नोच रहे थे। आबिद उन बच्चों को इस काम से रोके बग़ैर अपनी इबादत में मसरूफ़ रहा। ख़ुदावन्दे आलम ने उसी वक़्त ज़मीन को हुक्म दिया कि मेरे इस बंदे को निगल जा।"[4]

अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर की शर्तें

उलमा और मुजतहिदों ने अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर के लिए कुछ शरतें बयान की हैं जिनको ख़ुलासे के साथ बयान किया जा रहा है:-

1- मारूफ़ और मुन्कर की पहचान

अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर को सही तरीक़े से अंजाम देने की सबसे ख़ास शर्त मारूफ़ और मुन्कर, उनकी शर्तों और उनके तरीक़े को जानना है। इसलिए अगर कोई शख़्स मारूफ़ और मुन्कर को न जानता हो तो वह किस तरह इनको अंजाम देने के लिए कह सकता है या उन से रोक सकता है? एक डाक्टर उसी वक़्त बीमार का सही इलाज कर सकता है जब वह सही तरह से मर्ज़ को जानता हो।

2- असर होने की उम्मीद

अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर की दूसरी शर्त ये है कि अम्र व नही के असर होने की उम्मीद हो। अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर एक बेकार और बेमक़सद काम नहीं है। इस फ़रीज़े की अहमियत इस हद तक है कि ख़ुदावन्दे आलम ने असर न होने के गुमान के बावजूद भी अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर को वाजिब क़रार दिया है। इसी वजह से मराजे तक़लीद फ़रमाते हैं कि अगर हमें बहुत ज़्यादा लग भी रहा हो कि अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर का असर नहीं होगा तब भी उनका वुजूब इंसान की गर्दन से साक़ित नहीं होगा। इसलिए अगर ऐसा लग भी रहा हो कि अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर करने का असर नहीं होगा तब भी उन पर अमल करना वाजिब है।

3- नुक़सान का ख़तरा न हो

अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर की तीसरी शर्त ये है कि अम्र व नही करने की वजह से किसी नुक़सान का ख़तरा न हो। इस ज़िम्मेदारी के बहुत क़ीमती नतीजे सामने आते हैं। इसलिए अगर ये काम सही और अच्छे तरीक़े से अंजाम न पाए या नुक़सानदेह हो जाए तो ऐसी सूरत में दीनी काम नहीं हो सकता क्योंकि अपने निशाने और मक़सद से मेल नहीं खाता।

1-वसाएल, पे-395, 2- सूर-ए-तौबा/71, 3-नह्जुल बलाग़ह, कलमा-374, 4-बिहारुल अनवार, 88-97

सच्ची कहानियां

बरकत वाले पैसे

हज़रत अली[अ०] रसूल[स०] के कहने पर बाज़ार गए ताकि आप[स०] के लिए एक लिबास ख़रीद कर लें आएं। हज़रत अली[अ०] बाज़ार से एक लिबास बारह दिरहम का ख़रीद लाए। रसूल[स०] ने पूछा, "इसे कितने दिरहम में ख़रीदा?"

"बारह दिरहम में"

"यह मुझे पसन्द नहीं है। इससे सस्ता चाहिए, क्या बेचने वाला इसे वापिस कर लेगा?"

"पता नहीं, या रसूलुल्लाह[स०]"।

"जाओ! देखो शायद वह वापस लेने पर तैयार हो जाए?"

हज़रत अली[अ०] लिबास लेकर बाज़ार गए और बेचने वाले से कहा कि रसूल[स०] को इससे सस्ता लिबास चाहिए। क्या तुम इसे वापस ले सकते हो?

बेचने वाले ने हज़रत अली[अ०] को पैसे वापस कर दिए। हज़रत अली[अ०] पैसे लेकर रसूल के पास चले गए। इसके बाद आप दोनों साथ-साथ बाज़ार गए। रास्ते में रसूल[स०] की निगाह एक कनीज़ पर पड़ी जो रो रही थी। आप[स०] उसके पास गए और पूछा, "क्यों रो रही हो?"

"मेरे मालिक ने चार दिरहम देकर मुझे बाज़ार भेजा था। मुझसे वह पैसे कहीं खो गए। इसलिए अब मेरी घर जाने की हिम्मत नहीं पड़ रही है।"

रसूल[स०] ने उन बारह दिरहमों में से चार दिरहम कनीज़ को दिए और फ़रमाया, "जो कुछ ख़रीदना हो ख़रीद लो और घर वापस चली जाओ।" और रसूल[स०] ने अपने लिए एक चार दिरहम का लिबास ख़रीद लिया।

बाज़ार से वापसी पर आप ने एक बेलिबास आदमी को देखा तो फ़ौरन अपना लिबास उतार कर उसे दे दिया। दोबारा आप फिर बाज़ार गए और दूसरा कपड़ा चार दिरहम का ख़रीद कर पहन लिया। रास्ते में फिर उसी कनीज़ को देखा जो हैरान, परेशान और सहमी हुई बैठी थी। आप[स०] ने पूछा,

"तुम घर क्यों नहीं गई?"

"या रसूलुल्लाह! बहुत देर हो गई है और मुझे डर है कि वह मुझे मारेगा और कहेगा कि इतनी देर कहाँ लगा दी?"

"अपने घर का पता बताओ और मेरे साथ चलो। मैं तुम्हारी सिफ़ारिश कर दूँगा कि तुम्हें कोई कुछ न कह सके।"

रसूल[स०] कनीज़ के साथ घर तक पहुँचे और दरवाज़े पर पहुँचते ही बुलन्द आवाज़ में कहा, "ऐ घर वालो! तुम पर मेरा सलाम हो।"

कोई जवाब सुनाई नहीं दिया। दूसरी बार फिर सलाम किया। फिर भी जवाब न आया। आप[स०] ने तीसरी बार फिर सलाम किया। सब ने जवाब दिया, "अस्सलामु अलैकुम या रसूलुल्लाह!"

"पहली बार क्यों जवाब नहीं दिया? क्या मेरे आवाज़ नहीं सुनी थी?"

"हाँ, पहली ही बार सुनकर समझ गए थे कि आप ही हैं।"

"फिर देर से जवाब देने की क्या वजह थी?"

"ऐ अल्लाह के रसूल[स०] हमें अच्छा लग रहा था कि आपका सलाम दोबारा सुनें। आपका सलाम हमारे लिए ख़ैर और बरकत और सलामती है।"

"तुम्हारी इस कनीज़ को देर हो गई है। मैं इसकी सिफ़ारिश के लिए आया हूँ ताकि तुम इसको सज़ा न दो।"

"ऐ रसूले ख़ुदा! आपके मुबारक क़दमों की बरकत से मैं इस कनीज़ को अभी आज़ाद किए दे रहा हूँ।"

रसूल[स०] ने फ़रमाया, "ख़ुदा का लाख-लाख शुक्र! बारह दिरहम कितने बरकत वाले थे कि जिनसे दो बेलिबासों को लिबास मिल गया और एक कनीज़ आज़ाद हो गई।"

सलाम

इफ़्तेख़ार आरिफ़

जो इज़्न हो तो लबकुशा हो ये गुलाम, या हुसैन
बस एक ज़िक्र या अली[अ०] बस एक नाम, या हुसैन

ज़मीने करबला से ता बा ख़ाके शाम, या हुसैन
फ़िज़ाओं में है ज़ैनबे हज़ीं[स०] का नाम, या हुसैन

मैं बारगाहे अर्शे मंज़िलत से हो के आया हूँ
वहीं अता हुआ है मुझको ये सलाम, या हुसैन

अली[अ०] पे जुल्म, फ़ातिमा[स०] पे जुल्म, मुजतबा[अ०] पे जुल्म
तमाम जुल्म आप पर हुए तमाम, या हुसैन

मैं बार-बार आऊँ ख़ाके करबला को चूमने
अजब नहीं ख़ुदा करे ये इंतेज़ाम, या हुसैन

ख़ुदा करेगा मैं रजज़ पढ़ूँगा मदहे शाह में
क़याम जब करेंगे वक़्त के इमाम, या हुसैन

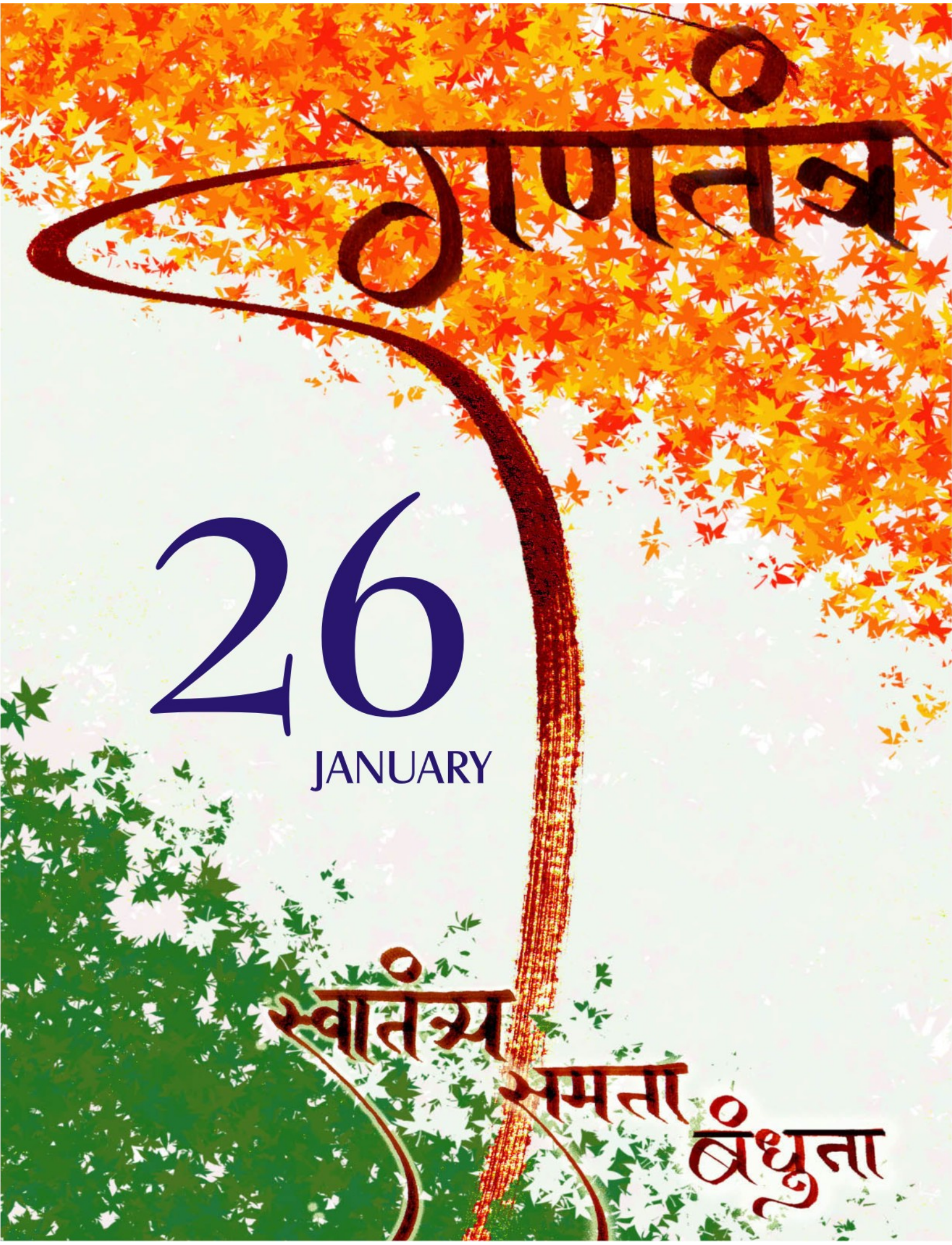
गणतंत्र
26
JANUARY
स्वातंत्र्य
समता
बंधुता

TAHA TV

عزاداری

MOHARRAM 2011

TAHA TV: 9936 653 509, 9453 826 444
Email: tahatv@gmail.com